दामामा
जनवरी १९८१

जीवन और हनु प्रस्तुत करते हैं:

जब 'मार्मट' यानी हिममूष (गिलहरी जैसे) सूखी घास ले जाते हैं तो उनमें से ही एक गाड़ी बन जाता है। दूसरे पूंछ की तरफ से उसे घसीटते हैं।

'स्कूल-मास्टर' मछली के पीछे छोटी छोटी मछलियां ऐसे चलती हैं जैसे स्कूल की कोई क्लास-ज्ञान के लिए नहीं, भोजन की तलाश में। उसके चलने से जो शोर होता है उससे नन्हे नन्हे समुद्री जीवों में हलचल सी मच जाती है और वे इनका भोजन बन जाते हैं।

'सील मछली' (ग्रे एलीफेंट सील) नींद खराब होजाने पर चिड़चिड़ी हो जाती है और तंग करने वालों पर गिट्टियां तथा कंकड़ फेंकती हैं।

'ऊदबिलाव' (बीवर) के झोंपड़े तथा बांध को जब बाढ़ से खतरा पैदा हो जाता है तो वे बांध के ऊपरी भाग में विशेष प्रकार का मार्ग बना लेते हैं। इससे बाढ़ का पानी बिना किसी हानि के निकलता रहता है।

'सिवलेल' यानी अमेरिकी मूष पेड़ पर भोजन की तलाश में चढ़ते समय वापसी के लिए पहले से ही इन्तज़ाम कर लेता है। यह शाखाओं को छोटे छोटे टुकड़ों में काटता जाता है - लौटते समय जिन पर पैर रख कर वह आसानी से उतर जाता है।

जीवन बीमा आपके भविष्य को सुरक्षित बनाने का सबसे अचूक रास्ता है। इसके बारे में और जानकार हो जाइये।

भारतीय जीवन बीमा निगम

daCunha-LIC-103 HN

अगली बार: जीवन और हनु अपने भविष्य को सुरक्षित रखने के सबसे विश्वस्त तरीके पर विचार विमर्श करते हैं

चन्दामामा-कैमल रंग प्रतियोगिता

निःशुल्क प्रवेश

इनाम जीतिए

कैमल-पहला इनाम १५ रु.
कैमल-दूसरा इनाम १० रु.
कैमल-तीसरा इनाम ५ रु.
कैमल-आश्वासन इनाम ५
कैमल-सर्टिफिकेट १०
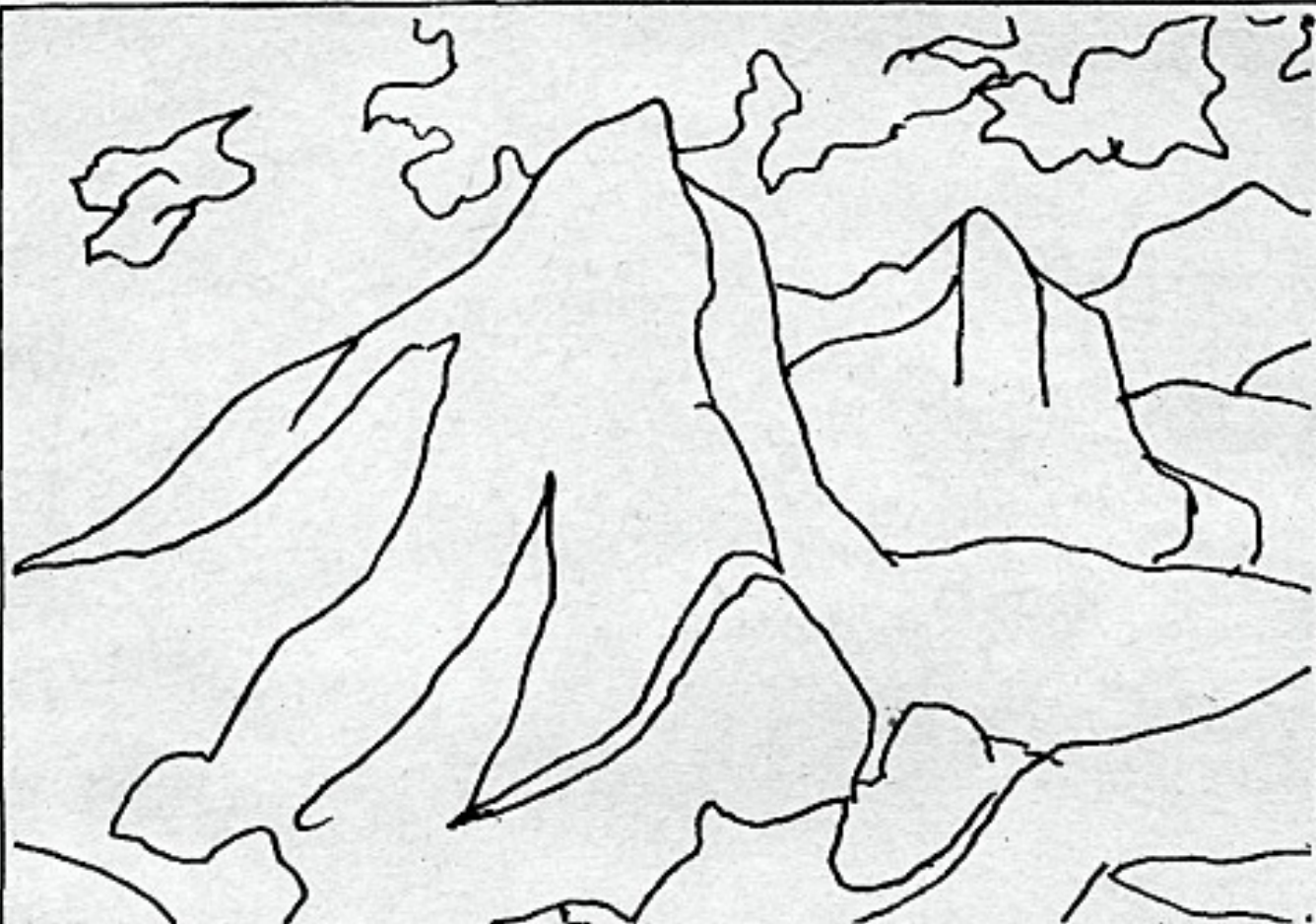
केवल १२ वर्ष तक के विद्यार्थी प्रतियोगितामें शामिल हो सकते हैं। उपर दिये गये चित्रमें अपने मनचाहें कैमल रंग भर दिजिए। अपने रँगीन प्रवेश-पत्र नीचे दिये गए पते पर भेजिए P.B. No. 9928, COLABA, Bombay-400 005.
परिणाम का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा। और कोई भी पत्रव्यवहार, नहीं किया जाएगा।

Name.. Age..................
Address...

कृपया अपना नाम और पता अंग्रेज़ी में लिखिए।

Vision

CONTEST NO.18

कृपया ध्यान रखिए कि पूरा चित्र पेंट किया जाये।
चित्र भेजने की अंतिम तारीख: *31-1-1981*

वुडवर्ड्स ग्राइप वाटर

CAS/OPPL/3/80 HIN

चन्दामामा
संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी
"देवी भागवत" रंगीन धारावाही इस अंक के साथ समाप्त हो रहा है। अगले अंक से "विघ्नेश्वर" धारावाही प्रारंभ होगा। यह नया रंगीन धारावाही अनेक सुंदर कथाओं से भरा हुआ है, इसलिए आशा ही नहीं एवं पूर्ण विश्वास है कि पाठकों को यह नया धारावाही रोचक प्रतीत होगा।
अमर वाणी
संतोषामृत तृप्तानां, यत्सुखं शांतचेतसाम् ।
कुतस्तद्धनलुब्धानां, इतश्चेतश्च धावताम् ।।
[अमृत जैसे आनंद का अनुभव करते शांत मन रखनेवाले ही सुखी होते हैं! ऐसा सुख धन की लालच रखते नाना प्रकार की यातनाएँ भोगनेवालों को प्राप्त नहीं होता।]
वर्ष : ३३
जनवरी १९८१
अंक : ५
एक प्रति : १-५०
: :
वार्षिक चन्दा : १८-००

ए. पूर्णचन्द्रराव, विशाखपट्टणम ।

प्र. : मानव का तापमान ९८.४ डिग्री है । गरमी के दिनों में अगर ९८.५ या ९९ डिग्री तापमान हो, तो वह हमारे शरीर के साधारण तापमान के समान है न? शरीर का तापमान कैसे पैदा होता है? अगर बुखार १०४ डिग्री का हो तो मनुष्य चल नहीं पाता, लेकिन गरमी के मौसम में उसी तापमान में मनुष्य कैसे चल सकता है?

उ. : वायुमण्डल के तापमान से संबंध रखे बिना ही शरीर अपने तापमान को एक ही स्तर —९८.४ डिग्रियों में—रखता है । मानव शरीर में प्रति क्षण पैदा होनेवाला तापमान अपने नियंत्रण को न खोकर पसीने, सांस तथा अन्य विसर्जनों के द्वारा ताप को त्यागता रहता है । जब जब वायु मण्डल का तापमान शरीर के ताप के बराबर हो जाता है, तब शरीर के द्वारा प्रति क्षण उत्पादन करनेवाले अतिरिक्त ताप को वायु में छोड़ना संभव नहीं होता ! पसीना तो होता है, मगर उसके भाप बन जाने पर ही शरीर ठण्डा होता है । वायु में तर ज्यादा होने पर पसीना भाप नहीं बन जाता । ऐसी हालत में पंखे के जरिये शरीर को शीतल बनाना होगा । इसी तरह ठण्डे देशों में तापमान बर्फ़ से भी कम स्तर पर उतर जाता है । उस हालत में शरीर के द्वारा प्रति क्षण तैयार होनेवाला तापमान पर्याप्त नहीं होता । शरीर के तापमान को बढ़ाने के लिए अधिक भोजन करना होगा । शरीर में उत्पन्न होनेवाले ताप को रोकने के लिए ऊनी और चमड़े के वस्त्र धारण करना होगा । कुछ लोगों का भ्रम है कि ऊनी कपड़े गरमी पैदा करते हैं । वे ताप का निरोध करते हैं । इसके उदाहरण के रूप में अगर हम बर्फ़ के टुकड़े को ऊनी कपड़े में लपेटकर रख दे, तो उसके गलने से रोकेगा, साथ ही बाहर की गरमी से बर्फ़ के टुकड़े को गलने से ऊनी कपड़ा रोक देता है ।

बाहर की गरमी १०४ डिग्री भले ही हो, पर शरीर का तापमान ९८.४ ही होता है । बुखार के द्वारा शरीर का ताप जब १०४ डिग्री हो जाता है, तब बाहर भले ही बर्फ़ गिरती हो, मनुष्य चल नहीं पायेगा । उसके न चलने का कारण बीमारी है, ताप नहीं ।

आत्म विश्वास

मोहनदास पच्चीस साल का हो गया, फिर भी वह किसी जिम्मेदारी को उठाने तैयार न था। पिता ने उसे बड़े ही लाड-प्यार से पाल-पोसकर बड़ा किया। पढ़ाई में भी वह कच्चा निकला। तिस पर वह आवारागर्दी करने लगा। वैसे उसके यहाँ कोई बड़ी संपत्ति भी न थी।

फिर भी कई लोग उसके साथ अपनी लड़की ब्याहने को तैयार हो गये। क्योंकि देखने में वह बड़ा सुंदर था।

मोहनदास के जान-पहचान के लोग अकसर उससे कहा करते थे–"भाई, तुम देखने में बड़े सुंदर हो, साथ ही अगर तुम कोई नौकरी पा सको तो अप्सरा जैसी कन्या तुम्हारे साथ शादी करने को तैयार हो जाएगी!"

मोहन उन्हें बराबर यही जवाब देता– "क्या मेरे बाबूजी अपनी कमाई से एक और व्यक्ति का पालन-पोषण नहीं कर सकेंगे?" इसका कारण यह था कि काम करने का नाम सुनते ही मोहनदास के तन-बदन में बिच्छू डंक मारने का अनुभव होता था।

एक दिन मोहनदास का दोस्त पड़ोसी गाँव में कोई रिश्ता देख आया और लौटकर उसने अपना अनुभव यों सुनाया:

"दोस्त! कन्या को एक अप्सरा समझो! वह एक बड़ी भारी संपत्ति की वारिस भी है! लेकिन कन्या की माँ दुर्गावती ने मेरे मुंह पर ही यह कह दिया कि मैं उनकी कन्या के सौंदर्य के सामने तुच्छ हूँ! तुम जाकर उस कन्या को एक बार देख तो लो! अगर उसके साथ तुम्हारी शादी हो गई तो तुम्हें नौकरी करने की कोई जरूरत नहीं पड़ेगी। घर जमाई दामाद बन कर रह सकते हो।"

यशवंतराव पाटील

बाहर आई और खीझ कर बोली—"फिर से सगाई की बात?" मोहन उस कन्या के रूप-सौंदर्य को देख मुग्ध हो उठा।

"आप का नाम? गांव? पढ़ाई? और आप की आदतें कैसी हैं?" यों कई सवाल करके उनका जवाब पाकर रानी घर के अन्दर चली गई।

इसके बाद दुर्गावती ने मोहनदास को समझाया—"बेटा, अब तुम जा सकते हो! हम अपना निर्णय जल्दी बता देंगे।"

उस मकान का वैभव, रानी का सौंदर्य आदि देखने के बाद मोहनदास का अपनी किस्मत पर से बिश्वास जाता रहा। मगर दुर्गावती ने एक सप्ताह के बाद किसीके द्वारा मोहन के घर खबर भिजवादी—"लड़का हमें पसंद आया है। महूर्त का निर्णय कीजिए।"

मोहनदास को यह सुझाव बड़ा अच्छा लगा। दूसरे ही दिन वह अपने पिता तक को बताये बिना पड़ोसी गाँव में चला गया।

मोहन को दुर्गावती के मकान का पता बडी आसानी से लग गाया। किवाड़ पर दस्तक देते ही दुर्गावती ने खुद आकर दर्वाजा खोला और पूछा—"तुम कौन हो? ऐसा मालूम होता है कि तुम मेरी रानी बिटिया को देखने आये हो?"

दुर्गावती मोटी थी, विधवा भी।

मोहन ने स्वकृति सूचक सर हिलाया।

"बेटी, रानी! एक और युवक आया है!" दुर्गावती ने अपनी बेटी को पुकारा। रानी अपनी पढ़ने वाली पुस्तक के साथ

यह खबर सुनते ही मोहनदास उछल पड़ा। सब लोग यह सोच कर ईर्ष्या करने लगे कि मोहन की क़िस्मत खुल गई है।

लोगों ने मोहनदास के पिता को यही समझाया—"कन्या का परिवार संपन्न है। सारी जयदाद तुम्हारी ही है। इसलिए दहेज, भेंट-उपहार की बात चलाकर इस रिश्ते को मत तोड़ लीजिएगा।"

जल्दी ही मोहन की शादी वैभव पूर्वक संपन्न हुई। चार-पांच दिन कन्या के घर

बिताकर मोहन का पिता अन्य रिश्तेदारों के साथ अपने घर लौट आया।

मोहर यह सोच कर मन ही मन बड़ा खुश था कि उस की सास उसे घर जमाई बनाकर रख लेगी। मगर दुर्गावती एक बार बातों के सिलसिले में अपना आक्रोश प्रकट करने लगी—"सुनते हो न मेरे दामाद! पटेल का दूसरा दामाद महीने में पंद्रह दिन ससुराल में पड़ा रहता है और दावतें उड़ाता रहता है। अगर मैं होती तो लात मारकर भगा देती।"

ये बातें सुनने पर मोहन का सर चकरा गया। उसे मालूम हुआ कि उसकी सास उसे किसी भी हालत में घर जमाई दामाद बना कर रखना नहीं चाहती है।

दो-तीन दिन बाद मोहन उदारता दिखाते बोला—"सासजी, आप इस उम्र में बेचारी अकेली कैसे यहाँ रह सकती हैं? हमारे साथ मेरे घर क्यों नहीं चलतीं?"

"बेटा, जिसको जहाँ रहना है, वहीं पर रहने से इज्जत बनी रहती है। अभी मैं पचास साल की भी नहीं हूँ। कल का दिन बहुत ही मंगलकारी है। तुम दोनों जा सकते हो।" दुर्गावती ने कहा।

लाचार हो कर मोहन रानी को लेकर अपने घर लौटा। आज तक वह अकेला था, इसलिए बिना फ़िक्र और जिम्मेवारी

के वह अपने दिन यों ही काट लेता था। अब रानी उसके सर का बोझ मालूम पड़ी। अपनी पत्नी के खर्च केलिए भी पिता से रुपये मांगना उसे लज्जा की बात मालूम हुई। इसलिए एक दिन उसने रानी से कहा—"मैं कोई न कोई व्यापार शुरू करूंगा। तुम अपनी मां से पांच हज़ार रूपये मांगकर लेती आओ।"

रानी हंस पड़ी और बोली—"बालू से तेल निकाला जा सकता है, पर मेरी माँ के हाथ से एक पैसा भी नहीं निकलेगा।"

फिर भी मोहन ने अपनी सास के पास किसी के द्वारा खबर भिजवाई कि व्यापार करने के लिए उसे पाँच हज़ार रुपये भेजें।

दुर्गावती ने साफ़ कहला भेजा–"जिसके पास रुपये न हो, वह व्यापार क्यों करे? उससे कह दो कि कोई नौकरी ढूँढ ले। सोने की गुडिया जैसी लड़की के साथ मैं ने उसकी शादी की। वह मुझसे एक पैसे की भी आशा न रखे।"

यह खबर सुनते ही मोहन का दिल बैठ गया। उसने सोचा कि अब आलसी बने रहने से कोई फ़ायदा नहीं है। जो पति कमाऊ नहीं होता वह पत्नी की नजर में भी गिर जाएगा। जिंदगी भर किसी के ऊपर निर्भर हो आत्माभिमान को खो बैठना नीचतापूर्ण कार्य है।

यों विचारकर मोहन ने महीने भर की दौड़ धूप के बाद आखिर कोई नौकरी पा ली। अब उसे अपनी जिंदगी आनंददायक मालूम होने लगी। इसके पहले दिन बिताना उसे मुश्किल मालूम होता था। कभी कभी उसे खीझ मालूम होती थी। अब उसकी जगह उत्साह ने ले लिया। एक साल बीतते-बीतते मोहनदास पिता बन बैठा।

अपनी नातिन को देखने दुर्गावती आ पहुँची। नातिन के गले में सोने की माला पहनाकर बोली–"बेटा, तुम बदल गये हो। मुझे बड़ी खुशी है। देखने में सुंदर हो। तुम्हारा परिवार भी प्रतिष्ठित है। मगर पता लगाने पर मुझे मालूम हुआ था कि तुम आलसी हो और अपनी जिम्मेदारी समझते न हो। मैं ने इस विश्वास के साथ अपनी लड़की की शादी तुम्हारे साथ की कि जिम्मेदारी का बोझा आ पड़ने पर तुम अपने आप सुधर जाओगे। तुम्हारे आलसीपन को दूर करने के लिए ही मैं ने तुम्हारे साथ ऐसा कड़ा व्यवहार किया था। क्या मैं यह सारी संपत्ति अपने साथ थोड़े ही उठाकर ले जाऊँगी? यह सब संपत्ति तुम्हारी ही है।"

इस पर मोहनदास ने पूर्ण आत्मविश्वास के साथ कहा–"मेरी कमाई हमारे परिवार को सुखपूर्वक चलाने के लिए काफी है। यदि आप अपनी संपत्ति देना ही चाहती हैं तो अपनी नातिन के नाम कर दीजिएगा।"

[८]

[जंगल में रास्ता ढूंढते आगे बढ़नेवाले समरसेन और उसके सैनिकों को जान के ख़तरे में फंसा एक नया सैनिक दिखाई दिया। उसके द्वारा उन लोगों ने कुंडलिनी द्वीप से आये कुंभण्ड के राजद्रोह का समाचार जान लिया। समरसेन सोच ही रहा था कि उस राजद्रोही का अंत कैसे करे? तभी अचानक उनके सामने चतुर्नेत्र आ धमका। बाद...]

मांत्रिक चतुर्नेत्र को हठात् अपने सामने देख समरसेन और उसके सैनिक भयकंपित हो उठे। नया सैनिक तो एक दम कांप उठा। चतुर्नेत्र के गुप्तचर काला उल्लू और नर वानर उनके समीप में आ खड़े हुए।

चतुर्नेत्र ने हँसते हुए कहा—"तुम लोग डरो मत! दूसरों की हानि करना कभी मेरा आशय नहीं रहा है। उस एकाक्षी मांत्रिक को छोड़ इस दुनिया में मेरा कोई दूसरा शत्रु नहीं है। वह मेरा अंत करना चाहता है। इसीलिए मुझे उसे अपना दुश्मन मानना पड़ रहा है।" फिर नये सैनिक की ओर देख उसने पूछा—"यह नया आदमी कौन है?"

"मेरा नाम धनपाल है। मैं खतरे में फंसा हुआ था। इन लोगों ने मुझे बचाया है।" नये सैनिक ने जवाब दिया।

चतुर्नेत्र ने अपना सिर हिलाकर कहा– "इस वक़्त तुम लोग खतरे में फंसने जा रहे हो। इसके पहले अगर किसी ने तुम लोगों की हानि पहुँचाने की कोशिश की हो, तो वह सिर्फ़ एकाक्षी मांत्रिक ही है। अब तुम लोगों को इस द्वीप के दक्षिणी पहाड़ों के उस पार से तुम जैसे लोगों के द्वारा ही तुम्हारे प्राणों को खतरा पहुँचनेवाला है।"

उन लोगों के बीच यों वार्तालाप हो ही रहा था, तभी झाड़ियों के पीछे छिपे दो जंगली लोग उन पर निगरानी रखे हुए थे। समरसेन को इसका पता न था। उसने चतुर्नेत्र की ओर दो क़दम आगे बढ़ाकर कहा–"चतुर्नेत्र! आप भले ही मांत्रिक क्यों न हो, पर भले आदमी जैसे लगते हैं। अगर आप के कहे मुताबिक़ सचमुच ही हमारी जानें खतरे में फंसनेवाली हों तो कृपया उससे बचने का कोई मार्ग बताइये।"

चतुर्नेत्र थोड़ी देर तक सोचता रहा, फिर बोला–"समरसेन, इस द्वीप में इन सारी मुसीबतों का मूल कारण पश्चिमी समुद्र तट के समीप आधी डूबी एक नौका है। सब को पता है कि उसमें धन के ढेर लगे हुए हैं। कई लोगों का विश्वास है कि ऐसी कोई चीज़ नहीं, जो धन के द्वारा पूरी नहीं की जा सकती हो। एकाक्षी मांत्रिक उसका धन चाहता है, मुझे तो उस नाव का पहरा देनेवाली नाग कन्या चाहिए। तुम लोग क्या चाहते हो? बताओ तो मैं यथा शक्ति तुम्हारी मदद करूँगा।"

समरसेन इसका जवाब दे रहा था, तभी नया सैनिक धनपाल कांपते हुए चीख़ उठा। समरसेन तथा उसके सैनिकों ने धनपाल की ओर मुड़कर बड़ी आतुरता से पूछा–"क्या हुआ? बताओ तो सही!"

धनपाल थोड़ी दूर पर स्थित झाड़ियों की ओर हाथ का इशारा करते हुए बोला– "उधर देखिये, वे जंगली लोग फिर से

आ धमके हैं। इन्हीं लोगों ने मुझे इस पेड़ से बांध दिया था।"

समरसेन तथा उसके सैनिकों को झाड़ियों के पीछे छिपकर उनकी ओर ताकनेवाले दो जंगली युवक दिखाई दिये। दूसरे ही क्षण समरसेन ने उनकी ओर तीर का निशाना किया।

चतुर्नेत्र ने समरसेन को रोकते हुए कहा-"समरसेन, तुम्हारे तीर का निशाना उन पर काम नहीं दे सकता। तुम आसमान में उड़नेवाले गरुड पक्षी तथा तेजी से भागनेवाले चीते को भी मार गिरा सकते हो, लेकिन ये लोग तुम्हारे तीर की गति से भी बढ़कर तेजी के साथ दौड़ सकते हैं। इनकी खबर मैं लूंगा।"

इसके बाद चतुर्नेत्र ने मुड़कर पुकारा- "नर वानर! उल्लूक!" दूसरे ही क्षण काला उल्लू और नर वानर उसके पास आ खड़े हुए।

"नरवानर, तुम उन भागनेवाले जंगली लोगों को खत्म करो! उलूक, तुम चारों तरफ़ एक बार निगरानी रखकर लौट आओ।" चतुर्नेत्र ने आदेश दिया।

उसी क्षण नर वानर छलांग मारकर आगे कूद पड़ा और भागनेवाले जंगली युवकों में से एक को अपने मजबूत हाथों से मरोड़कर पकड़ लिया। जंगली युवक

डर के मारे इस तरह चिल्ला उठा कि सारा जंगल एक बार गूँज उठा। नर वानर ने उस जंगली युवक को दो-तीन दफ़े घुमाकर ऊपर उछाल दिया। वह चीखते-चिल्लाते चट्टानों पर जा गिरा।

काला उल्लू भागनेवाले दूसरे जंगली युवक पर पंख फड़-फड़ाते उड़ने लगा। वह अपने तेज नाखूनों का उस युवक पर प्रहार करते चिल्लाने लगा।

इस दृश्य को देखने के बाद थोड़ा होश में आया हुआ नया सैनिक धनपाल चारों तरफ़ नज़र दौड़ाकर बोला—"मुझे बड़ी प्यास लगी है। क्या यहाँ कहीं समीप में पानी है?"

चतुर्नेत्र हाथ उठाकर बोला—"चाहे तुम्हें भयंकर प्यास क्यों न लगी हो, जल्दबाजी में आकर जहाँ भी पानी दिखाई दे, वहाँ पर उचित सावधानी के बिना मत जाओ। यह तो सब तरह से खतरनाक द्वीप है। तुम लोग मेरे साथ चलो; तुम्हें निर्मल जलवाला तालाब दिखा दूँगा।" यों कहकर चतुर्नेत्र आगे बढ़ा।

इसके बाद सब लोग तालाब के पास पहुँचे। उसमें मगर मच्छ तथा अन्य खूँख्वार जानवर तैर रहे थे। सब लोग तालाब की उस दिशा में पहुँचे, जहाँ पर ये जानवर न थे, वहाँ पर पानी में उतरे बिना किनारे ही रहकर सब ने अपनी प्यास बुझा ली। समरसेन तालाब के किनारे पेड़ों की छाया में खड़ा हो गया और चतुर्नेत्र ने जो बात बताई थी, उस पर विचार करने लगा। उसने कल्पना की कि चतुर्नेत्र के सुझाव के अनुसार दक्षिणी दिशा से आनेवाले मनुष्य संभवतः राजद्रोही कुंभाण्ड तथा उसके जंगली अनुचर होंगे।

पर चतुर्नेत्र ने समरसेन को जिस नाग कन्या की बात बताई, उसके संबंध में उसकी शंका दूर न हुई। वह चतुर्नेत्र से बोला—"आप अन्यथा न समझें! यह बात सच है न कि धन से लदी नाव का पहरा केवल अकेली नाग कन्या ही दे रही है?"

"इसमें असत्य की कोई बात नहीं है। चाहे तो तुम लोग मेरे साथ चलो, मैं तुम्हें उस नाव को और नाग कन्या को दिखा सकता हूँ। वह प्रदेश यहाँ से कोई ज्यादा दूर भी नहीं है।" चतुर्नेत्र ने कहा।

चतुर्नेत्र आगे आगे चलते रास्ता दिखाने लगा। उसके पीछे समरसेन और उसके सैनिक चल पड़े। थोड़ी ही देर में वे लोग एक ऊँचे पहाड़ पर पहुँच गये। वहाँ से एक दम शांत समुद्र दिखाई दे रहा था।

"लो, देखो, वह नाव दिखाई दे रही है न?" चतुर्नेत्र ने अपनी उंगली का इशारा समुद्र की ओर करते हुए समरसेन से पूछा। समरसेन तथा उसके सैनिकों ने उस दिशा में देखा। उन्हें नाव साफ़ दिखाई दे रही थी। वह नाव आधी डूब गई थी। फटे पालों के साथ लहरों पर तिर रही थी, मगर धन से लदी उस नाव का पहरा देनेवाली नाग कन्या उन्हें दिखाई नहीं दी।

"नाग कन्या तो दिखाई नहीं देती?" समरसेन ने आश्चर्य के साथ चतुर्नेत्र से पूछा।

यह सवाल सुनकर चतुर्नेत्र मुस्कुराकर बोला—"समरसेन, वह नाग कन्या भी यदि तुम्हारी आँखों को दिखाई दे तो फिर हमारे मंत्रों का महत्व ही क्या रहा? उस नाग कन्या को सिर्फ़ मैं तथा वह एकाक्षी मांत्रिक ही देख सकते हैं। एकाक्षी मांत्रिक धन की लालच में पड़कर उस नाग कन्या से बदला लेना चाहता है। मैंने तो उस कन्या को वर लिया है।"

इसके बाद समरसेन को कुछ नहीं सूझा। इसके पूर्व उसने धन के ढेरों के बारे में जो कुछ सुना था, तब उसने सिर्फ़ यही विचार किया था कि धन पर अधिकार करके उसे कुंडलिनी द्वीप में पहुँचाया जाय। पर अब उसे ऐसा मालूम होता है कि यह काम नामुमकिन है। इसमें एक कठिनाई यह है कि राजद्रोही

CHITRA

कुंभाण्ड भी उसी धन पर क़ब्जा करने की बात सोच रहा है। इसके साथ एकाक्षी मांत्रिक की झंझट तो है ही। इन सब से बढ़कर मुसीबत यह है कि बिना किसी प्रकार की मंत्र शक्ति की मदद के उस नाग कन्या के पहरे से बचकर नाव पर पहुँचना।

समरसेन यों विचार कर ही रहा था कि उसे भांपने की मुद्रा में चतुर्नेत्र ठठाकर हँस पड़ा और बोला—"समरसेन, तुम्हारे मन की हलचल को मैं समझ गया हूँ। इसी क्षण मेरे मन में एक उपाय सूझ रहा है। मैंने पहले ही भांप लिया था कि तुम नाव पर के धन को पाने के प्रयत्न में हो। मैं उस धन के मामले में तुम से कभी होड़ नहीं लगाऊँगा। तुम से होड़ लेनेवाला सिर्फ़ वह एकाक्षी मांत्रिक ही है। इसलिए मैं यही विचार कर रहा हूँ कि अगर हम दोनों एक हो गये तो सब कुछ आसानी से साध सकते हैं।"

चतुर्नेत्र के मुँह से ये बातें सुनने पर समरसेन का उत्साह उमड़ पड़ा। वह अब तक यही सोच रहा था कि इस ख़तरनाक द्वीप से प्राण बचाकर कैसे निकल जाय, अब उसके मन में एक नई आशा जगी। वह यह कि सब से पहले राजद्रोही कुंभाण्ड का अंत करना है। हो सके तो नाव पर के धन के ढेरों पर क़ब्ज़ा करना है। दरअसल उस नाव का रहस्य क्या है?
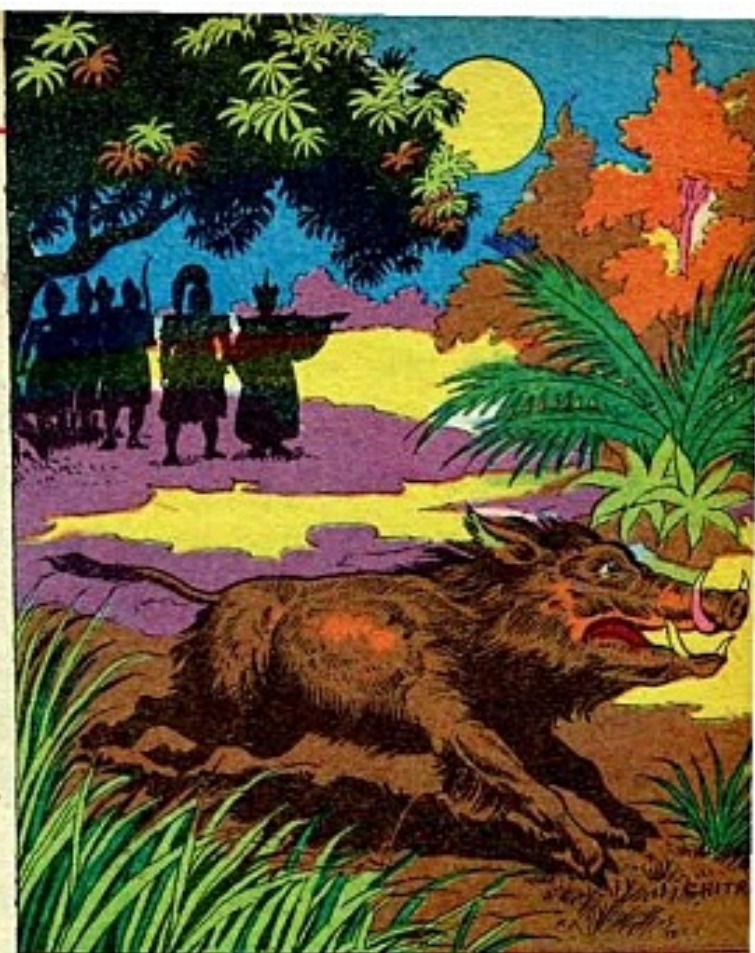
इन सब से पहले समरसेन धन के ढेरों से भरी उस नाव का रहस्य जानना चाहता था, इसी विचार से उसने चतुर्नेत्र से पूछा—"चतुर्नेत्र! मांत्रिक का नाम सुनते ही सहज ही कोई भी मानव भयभीत होगा! मगर इसी द्वीप में रहनेवाले आप के तथा एकाक्षी मांत्रिक के बीच बहुत बड़ा अंतर है। आप सहानुभूति और मित्र-प्रेम रखनेवाले जैसे दीखते हैं! मुझसे जो कुछ संभव होगा, मैं अपनी तरफ़ से पूरी मदद देने को तैयार हूँ। लेकिन

इसके पूर्व में धन से लदी उस नाव का रहस्य जानना चाहता हूँ ।"

चतुर्नेत्र ने झट इसका कोई उत्तर न दिया, थोड़ी देर झिझककर तब बोला—"सुनो, उस नाव, धन के ढेर और नाग कन्या की कहानी सुनानी है तो इसके पीछे बड़ा इतिहास छिपा हुआ है । वे सारी बातें सुनने के लिए शायद तुम्हारे मन में कुतूहल भी न होगा । संक्षेप में सुनाता हूँ; सुन लो : शायद तुमने शमन द्वीप की कहानी सुनी होगी । अगर सुनी भी हो तो शायद तुम लोग उस द्वीप को दूसरे नाम से जानते और मानते हो । उस शमन द्वीप पर शाक्तेय नामक राजा राज्य करते थे । शाक्तेय का मतलब तुम जानते होगे, वह चंडी का भक्त है । मंत्र-तंत्रों की विद्याओं में वह बेजोड़ है ।

"एक बार राजधानी नगर में देवी नवरात्र के उत्सव मनाये जा रहे थे । उस वक़्त शाक्तेय खुद देवी की पूजा कर रहा था । लोगों के कोलाहल के बीच चण्डीदेवी अचानक हुंकार कर उठी—"भक्तो, मैं तुम लोगों की भक्ति पर प्रसन्न हूँ । लेकिन केवल पूजा-अर्चना से मैं संतुष्ट नहीं हूँ । मेरे वास्ते तुम लोग एक अद्‌भुत मंदिर बनाओ ।"

इस पर शाक्तेय ने घुटने टेककर कहा था—"माताजी, मैं आप के वास्ते एक अद्‌भुत मंदिर के साथ आसमान को छूनेवाला एक गोपुर भी बनवा लूंगा ।"

इसके दूसरे ही क्षण चण्डीदेवी और उच्च स्वर में हुंकार कर उठी थीं—"मेरे लिए मंदिर व गोपुर साधारण पत्थर और मिट्टी से बनाओगे तो मैं संतुष्ट नहीं हो सकती । सारी इमारतें सोने व चांदी से बना लो । तभी जाकर मैं संतुष्ट हो सकती हूँ ।"

देवी के मुँह से ये शब्द सुनकर शाक्तेय आपाद मस्तक कांप उठा । चण्डी देवी के आदेश का उसे पालन करना होगा, लेकिन उतने विशाल मंदिर और गोपुर के लिए आवश्यक सोना और चांदी कैसे प्राप्त करे ?"

(और है)

कुशल व्यापारी

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल हमेशा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, आप को इस तरह मेहनत करते देख मुझे लगता है कि आप व्यावहारिक ज्ञान बिलकुल नहीं रखते। व्यावहारिक ज्ञान रखनेवाला व्यक्ति मोहनलाल गुप्त जैसे दरिद्रावस्था से उन्नत दशा को प्राप्त होता है। श्रम को भुलाने के लिए मैं आप को उसकी कहानी सुनाता हूँ, सुनिये :

बेताल यों सुनाने लगा : धर्मपुरी नामक राज्य के किसी गाँव के निवासी मोहनलाल गुप्त ने व्यापार करके अपनी ज़िंदगी बिताने का निश्चय किया। इसलिए उसने अपने गाँव के एक महाजन के यहाँ थोड़ा सा कर्ज लिया। लेकिन उसका व्यापार

बेताल कथाएँ

ठीक से न चला। इस वजह से मोहनलाल मियाद के अन्दर कर्ज चुका नहीं पाया।

महाजन अपना कर्ज वसूलने के लिए मोहनलाल पर दबाव डालने लगा। इस पर उसने महाजन को समझाया—"महाशय, जल्द ही कचहरी से हमारा वासुदेव आनेवाला है। उसके लौटने पर मैं आप का कर्ज चुका दूंगा।"

"क्या तुम बासुदेव को जानते हो?" महाजन ने अचरज में आकर पूछा।

"जानना क्या है? वह मेरा निकट रिश्तेदार जो है।" मोहनलाल ने जवाब दिया।

"तुमने आज तक मुझे क्यों नहीं बताया? तुम अपना कर्ज इतमीनान से चुका सकते हो? अच्छा, मैं चला।" यों कहकर महाजन जल्दी जल्दी चला गया।

महाजन का यह व्यवहार मोहनलाल को अजीब सा लगा। मगर इसका रहस्य उसे दूसरे दिन ही मालूम हुआ।

दूसरे दिन महाजन एक युवक को अपने साथ ले आया, और बोला—"लो, देखो, यह मेरा साला है, तुम अपने बासुदेव को समझाकर इसको कचहरी में कोई काम दिलाओ। अगर तुम यह काम करोगे, तो मैं तुम्हारा कर्ज माफ़ कर दूंगा।"

वास्तव में महाजन गलत समझ बैठा था। मोहनलाल का रिश्तेदार वासुदेव कचहरी में कोई छोटा-मोटा नौकर था। लेकिन उसी कचहरी में उसी नाम का

एक ऊँचा अधिकारी काम कर रहा था। महाजन ने सोचा, वह ऊँचा अधिकारी ही मोहनलाल का रिश्तेदार है।

मोहनलाल को जब पता चला कि महाजन गलत समझ बैठा है, तब उसके दिमाग में अचानक यह बात कौंध गई। यदि उसकी गलतफहमी को सच बना दे तो उसका कर्ज चुक जाएगा और साथ ही गाँव में उसकी साख बढ़ जाएगी।

"अच्छी बात है, मैं कोशिश करूँगा। आप कल मिलियेगा।" यों कहकर मोहनलाल ने महाजन को भेज दिया। उसी दिन कचहरी में जाकर अपने रिश्तेदार वासुदेव से मिला। कचहरी में काम करनेवाले बड़े बड़े अधिकारियों के नाम, उनके पद और उनका पूरा परिचय भी एक पुस्तक में लिख लिया।

इसके बाद मोहनलाल कचहरी के उच्च अधिकारी वासुदेव के दफ्तर में जाकर वहाँ के लोगों से बोला-"मुझे मण्डल के अधिकारी वीरवर्मा ने भेज दिया है। मैं इसी वक्त वासुदेव साहब से मिलना चाहता हूँ।"

फिर क्या था, मोहनलाल को जल्द ही वासुदेव साहब से मिलने की अनुमति मिल गई। वीरवर्मा के नाम लेते ही वासुदेव ने बताया-"उनसे कह दीजिएगा कि मैं जरूर उनके रिश्तेदार को नौकरी दूँगा, उस युवक को मेरे पास भज दे।"

इसके बाद महाजन के साले को दूसरे ही दिन कचहरी में नौकरी लग गई।

सारे गाँव में आग की तरह मिनटों में यह खबर फैल गई कि मोहनलाल ने कचहरी में किसी को नौकरी दिलाई है। यह भी अफ़वाह फैल गई कि कचहरी के बड़े बड़े अधिकारियों से वह परिचित है। सब लोग उससे दोस्ती करने व उसकी मदद पाने के लिए टूट पड़े। जो लोग कचहरी में अपने काम बनाना चाहते थे, वे सब मोहनलाल को भेंट-उपहार समर्पित कर अर्जियाँ देने लगे। उसके यहाँ रुपयों की वर्षा होने लगी।

मोहनलाल की व्यावहारिकता सफल सिद्ध हुई। सेनापति, कोशाध्यक्ष मण्डल के अधिकारी, न्यायाधिपति, दुर्गाधिपति जैसे ऊँचे अधिकारियों के साथ दूसरों के मित्र के रूप में उसका परिचय हुआ। धीरे-धीरे वह उन्हीं लोगों का मित्र बना। उसने कई लोगों के मुक़द्दमों को जितवाया, अनेक लोगों को नौकरियाँ दिलवाईं। लाखों रुपये कमाया। आखिर राजधानी नगर में ही भारी पैमाने पर व्यापार शुरू किया। वह सेठ मोहनलाल के रूप में राजा तथा मंत्री की दृष्टि में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति के रूप में प्रसिद्ध हुआ। किसी भी बड़े नामी व्यक्ति के घर यदि कोई उत्सव होते, सेठ मोहनलाल बढ़िया उपहार देता। राज परिवार में वर्ष-गांठ, नामकरण उत्सव या विवाह जैसे कार्य संपन्न होते तो सेठ मोहनलाल विनय पूर्वक "छोटा सा उपहार" कहकर अमूल्य रत्न भेंट दे देता था। वह इस हालत में पहुँच गया था कि किसी नौकर के द्वारा भी कोई संदेशा भेज देता तो दरबार के अन्दर उसका काम मिनटों में हो जाया करता था।

एक बार राजा की वर्ष-गांठ पर एक विशेष प्रकार की दावत हुई। उसमें सिर्फ़ ऊँचे पदाधिकारी ही सम्मिलित हुए। उस अवसर सब कोई कैसे उस हालत में पहुँचे, बिना छिपाये सच्ची बात कहने लगे। उनमें मोहनलाल गुप्त भी एक था। सब ने थोड़ा-बहुत सत्य को छिपाया

और नमक-मिर्च लगाकर अपना बड़प्पन जताया, मगर मोहनलाल ने अपनी असली हालत बताई। उसकी कहानी सुनकर सब ने खुश होकर तालियाँ बजाईं।

राजा ने मोहनलाल की सचाई की तारीफ़ करते हुए कहा—"आप सभी में मोहनलाल की व्यावहारिकता श्रेष्ठ है।"

बेताल ने यहाँ तक कहानी सुनाकर कहा—"राजन, मोहनलाल व्यवहार कुशल हो सकता है, मगर उसने धोखा दिया था न? आज भी वह उस धोखे की वजह से ही फ़ायदा उठा रहा है न? ऐसी हालत में सबके द्वारा उसकी तारीफ़ करने और राजा के द्वारा प्रशंसा करने का कारण क्या है? इसका समाधान जानते हुए भी न देंगे, तो आप का सिर फूट जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया—"इस संसार में कुछ लोग उच्च स्थिति में पैदा होते हैं, कुछ लोग धीरे-धीरे उच्च स्थिति पर पहुँच जाते हैं। इस दूसरे क़िस्म के लोगों के लिए व्यावहारिक कुशलता की ज़रूरत होती है। राजा तथा मंत्री के पुत्रों के लिए उच्च वर्ग में रहने के वास्ते व्यावहारिक कुशलता की ज़रूरत नहीं होती है। इसी प्रकार मोहनलाल जब उच्च वर्ग में पहुँच जाता है, तब उसके लिए व्यावहारिक कुशलता की ज़रूरत नहीं होती। मगर फुटकर चीज़ों की दूकान खोलने के लिए भी पैसों का अभाव रखनेवाला व्यक्ति उस दशा से राजधानी में धन्ना सेठ की दशा तक पहुँचनेवाले मोहनलाल की व्यावहारिक कुशलता निस्संदेह असाधारण है। एक बार अगर कोई उच्च दशा में पहुँच जाता है, फिर कोई भी इस बात को परखने की कोशिश नहीं करता कि वह कैसे उस हालत तक पहुँच गया है। इस प्रकार का परीक्षण करने पर व्यावहारिक दक्षता से ऊपर उठनेवाले सभी लोग दण्ड के शिकारी हो जाते हैं।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

प्यार का बदला

रमा ने ससुराल में क़दम रखते हुए सोचा कि उसकी सास उससे कसकर काम लेगी और सतायेगी। लेकिन रमा की सास नरम दिलवाली औरत थी। वह रमा को उसकी माता से भी ज्यादा प्यार करने लगी। उसकी इस उदारता का फ़ायदा उठाकर रमा ने बिलकुल काम करना बंद किया, सारा बोझ अपनी सास पर डाल दिया।

एक दिन रमा का भाई उसे देखने आया। उसकी पत्नी भी हाल ही में ससुराल आई थी। रमा ने अपने भाई से पूछा–"भैया, भाभी मालती घर के सारे काम-काज संभालती है न? माताजी को अब पूरा आराम मिलता है न?"

"नहीं, रमा! मालती बिलकुल काम नहीं करती, माँ पर काम का सारा बोझ पड़ गया है।" रमा के भाई ने जवाब दिया। इस पर रमा गुस्से में आकर बोली–"तब तो भैया, मालती को उसके मायके भेज दो, तभी उसकी अक़्ल ठिकाने लग जाएगी।"

"मैं भी यही बात सोच रहा था, लेकिन यहाँ पर तुम्हारी हालत देखने के बाद अपना विचार बदल लिया। जिस दिन मैं मालती को उसके मायके भेज दूंगा, उसी दिन बहनोई साहब तुम्हें हमारे घर भेज देंगे। सुना है, तुम्हारी वजह से तुम्हारी सास का काम बढ़ गया है।" रमा के भाई ने कहा। यह जवाब सुनने पर रमा की अक़्ल ठिकाने लगी। वह घर का सारा काम करने लगी।

सच्ची शिक्षा

सैकड़ों साल पहले की बात है। ज्ञान प्रिय नामक लड़के ने बचपन में काशी जाकर बड़े-बड़े गुरुओं की सेवा-शुश्रूषा की और सभी प्रकार की विद्याएँ सीख लीं। इस कारण सब कोई उसके पांडित्य और शास्त्रों के ज्ञान की तारीफ़ करने लगे।

लेकिन ज्ञान प्रिय के अन्दर एक तरह का असंतोष था। वह सोचने लगा—"मैंने सारी विद्याएँ सीख लीं, पर इनमें से एक भी विद्या मेरे भावी जीवन यापन के लिए उपयोगी नहीं है। मेरी शिक्षा में कोई कमी जरूर है। इसकी पूर्ति करने के बाद ही मैं शादी करके गृहस्थ बन जाऊँगा।"

इस विचार को लेकर ज्ञान प्रिय कई पंडितों की सेवा में पहुँचा। अपनी सारी विद्याओं का परिचय देकर पूछा—"कृपया बताइये कि मुझे अब अपनी शिक्षा पूरी करने के लिए क्या-क्या पढ़ना होगा!" सब ने यही जवाब दिया—"ज्ञान प्रिय, तुम्हारी शिक्षा अब पूरी हो चुकी है।"

एक वृद्ध ने यह सलाह दी—"बेटा, तुम्हारी शिक्षा में थोड़ी कसर रह गई है। मगर तुम्हें वह शिक्षा देनेवाला व्यक्ति एक ही है। वह लुहारगिरी का काम करते अमुक गाँव में बसा हुआ है। उसकी सेवा करोगे तो तुम्हारी शिक्षा संपूर्ण हो जाएगी।"

ज्ञान प्रिय का वृद्ध की बातों पर विश्वास जम गया। उसे इस बात की खुशी भी हुई कि उसकी शिक्षा पूर्ण होनेवाली है। इसके बाद वह उस लुहार की खोज में उसके गाँव पहुँचा। धौंकनी चलानेवाल लुहार के सामने साष्टांग दण्डवत करके विनती की—"महानुभाव, मैंने सारी विद्याएँ सीख लीं, फिर भी

मेरी शिक्षा थोड़ी अपूर्ण रह गई। कृपया आप मुझ पर अनुग्रह करके जीवनोपयोगी कोई विद्या सिखाइये।"

लुहार ने भट्टी के पास उठ खड़े होकर आदेश दिया—"तुम इसके आगे बैठकर धौंकनी चलाओ।"

ज्ञान प्रिय भट्टी के सामने बैठकर धौंकनी चलाने लगा।

एक दिन बीता, एक सप्ताह बीता, एक महीना बीता, आखिर एक साल भी बीत गया। ज्ञान प्रिय रोज़ धौंकनी चला रहा है, पर लुहार ने उसे कुछ नहीं बताया। ज्ञान प्रिय भी यह सोचकर मौन रहा कि "मैं जिस काम से आया हूँ, उसे वे अच्छी तरह से जानते हैं, ऐसी हालत में फिर उन्हें याद दिलाने की क्या जरूरत है?"

मगर एक साल बीतने के बाद भी गुरुजी ने ज्ञान प्रिय की शिक्षा की बात नहीं उठाई, इसलिए खिन्न होकर ज्ञान प्रिय ने धौंकनी चलाना रोककर लुहार से पूछा—"गुरुदेव, मेरी शिक्षा..."

"तुम धौंकनी चलाओ।" लुहार ने बस यही जवाब दिया। इसके बाद ज्ञान प्रिय ने भी कभी अपने गुरु को इस बात की याद न दिलाई।

इस प्रकार पाँच साल बीत गये।

एक दिन ज्ञान प्रिय भट्टी के पास बैठकर धौंकनी चलाने जा रहा था, तब लुहार ने प्रवेश करके उसके कंधे पर प्यार से अपना हाथ रखा। ज्ञान प्रिय ने विनयपूर्वक उसे प्रणाम करके पूछा—"गुरुदेव, कैसी आज्ञा है?"

"बेटा, तुम्हारी शिक्षा अब पूर्ण रूप से समाप्त हो चुकी है। तुम अब घर जाकर शादी करके सुख पूर्वक गृहस्थी चला सकते हो। तुमने सभी विद्याओं से बढ़कर सहनशीलता का संपादन किया है।" लुहार ने बताया।

ज्ञान प्रिय परमानंदित हो अपने गुरु से विदा लेकर घर पहुँचा। गृहस्थ बनकर अनेक वर्षों तक सुख पूर्वक जीवन बिताया और बहुत बड़ा ज्ञानी कहलाया।

अंध विश्वास

सौ साल पहले की बात है। रामशास्त्री नामक एक गरीब ब्राह्मण के घर चार बेटियाँ पैदा हुईं। चारों बेटियों की शादियाँ करके ससुराल भेजते वह नाकों दम हो गया। उसने काफी रुपये कर्ज लिये थे। ऋणदाताओं से तंग आकर एक दिन आधी रात के वक़्त किसी से बताये बिना घर से चल पड़ा।

उस अंधेरे में पैदल चलते गाँव के बाहर एक बरगद के पास पहुँचा। उस पेड़ पर सैकड़ों सालों से एक ब्रह्म राक्षस रहा करता था। यह बात समीप के सभी गाँववाले अच्छी तरह से जानते थे। इस वजह से दिन के वक़्त भी उस पेड़ के पास जाने में लोग डरते थे। इसलिए उस पेड़ के समीप से जानेवाले ब्राह्मण को देख ब्रह्म राक्षस आश्चर्य में आ गया और चिल्ला उठा—"रुक जाओ!"

रामशास्त्री पल भर के लिए डर गया, फिर भी वह स्वभाव से समयस्फूर्ति रखनेवाला था। उसने अपनी कन्याओं की शादियाँ करके सब तरह की मुसीबतें उठाई थीं। वह हिम्मत करके पूछ बैठा—"कौन हो तुम?"

ब्रह्म राक्षस की आवाज़ सुनते ही रामशास्त्री को डर के मारे बेहोश न होते देख राक्षस को यह बात अपमानजनक मालूम हुई। वह रामशास्त्री के आगे कूद पड़ा और क्रोध में आकर चिल्ला उठा—"क्या तुम्हें मालूम नहीं होता कि मैं कौन हूँ?"

रामशास्त्री ने भोले बनकर पूछा—"कौन हो भाई तुम? इस आधी रात के वक़्त अंधेरे में तुम यहाँ पर क्यों आये हो? यहाँ पर तो साँप, बिच्छु होंगे! तुम तो देखने में बड़े नाज़ुक मिजाज के लगते हो?"

सरला पाठक

ब्रह्म राक्षस के मन में संदेह पैदा हुआ कि जैसे उसे सभी लोग भयंकर आकृति के मानते हैं, शायद वह वैसा नहीं है। इस पर वह रामशास्त्री की ओर शंका भरी नज़र दौड़ाकर बोला—"मेरे सामने यह कपट नाटक रचते हो? मैं ब्रह्म राक्षस हूँ, तीन सौ वर्षों से इसी पेड़ पर रहता हूँ।"

रामशास्त्री ने राक्षस की ओर अविश्वास पूर्ण दृष्टि दौड़ाकर कहा—"यह तो बिलकुल ना मुमकिन है। क्या तुम सोचते हो कि मैं ब्रह्म राक्षस को पहचान नहीं पाता हूँ। यदि तुम सचमुच ब्रह्म राक्षस होते तो क्या डर के मारे मर न गये होते? तुम्हें देखने पर मुझे अपने दामादों को देखने से जो डर लगता है, उसका चौथा अंश भी डर नहीं लग रहा है।"

ये बातें सुनने पर राक्षस को बड़ा आश्चर्य हुआ। रामशास्त्री पुनः बोला—"तुम्हारी आँखें बड़ी सुंदर और शांत हैं। तुम चाहे जैसे भी क्रोध भरी नज़र मुझ पर दौड़ाओ, उस दृष्टि में मेरे बड़े दामाद के क्रोध का सौवाँ हिस्सा भी मुझे नहीं दीखता। तुम्हारा कंठ स्वर कैसा कोमल है! तुम्हारा गर्जन मेरे दामादों की हँसी से ज्यादा आनंददायक प्रतीत होता है।"

ब्रह्म राक्षस सोचने लगा—"क्या मानवों में मुझ से भी भयंकर व्यक्तियों का होना संभव है? क्या इन तीन सौ सालों के बीच मानवों की शक्ति ऐसी बढ़ गई है?" यों सोचकर अपनी शंका को दूर करने के ख्याल से रामशास्त्री से पूछा—"यह तुम क्या कहते हो? मेरे अन्दर जो ताक़त नहीं है, वह ताक़त तुम्हारे दामादों को कैसे प्राप्त हुई?"

रामशास्त्री ने राक्षस की ओर सहानुभूति पूर्ण दृष्टि डालकर पूछा—"क्या तुम्हारी शादी हो गई है, भाई?"

"नहीं, लेकिन बताओ कि शादी होने से क्या होता है?" ब्रह्म राक्षस ने पूछा।

"हे मेरे भोले-भाले दोस्त! क्या तुम नहीं जानते कि शादी के मंत्रों में कैसी ताक़त है? उन मंत्रों के प्रभाव से साधारण

मनुष्य दामाद बनकर अपार शक्ति प्राप्त करते हैं। मेरे दामाद अगर आँखें लाल करके देखते हैं तो मेरी बेटी, मेरी पत्नी और मैं–हम सब पानी-पानी हो जाते हैं। अगर नाराज़ होकर चिल्ला उठते हैं तो क्या कहूँ, हम सब उनके पैरों पर गिर जाते हैं। इसलिए तुम्हारा क्रोध और गर्जन मुझ पर कोई असर डाल नहीं पाये!" रामशास्त्री ने राक्षस को समझाया।

इस पर ब्रह्म राक्षस ने सोचा, अगर यह ब्राह्मण की बात सच हो और शादी के होते ही मानवों को ऐसी ताक़त मिल जाती हो तो मुझे देख डरनेवाला कोई नहीं रहेगा। इसलिए उसे भी शादी करके अपनी ताक़त बढ़ानी होगी।

रामशास्त्री ने ब्रह्म राक्षस के चेहरे को परखकर देखा, उसके मन की चिंता को भांपकर बोला–"भाई, तुम भी आख़िर कितने दिन तक ब्रह्मचारी बनकर रह सकते हो? शादी करके सब पर अपना अधिकार चलाओ।" यों सलाह देकर ब्राह्मण वहाँ से निकलने को हुआ।

ब्रह्म राक्षस को ब्राह्मण की सलाह बड़ी अच्छी लगी। उसने रामशास्त्री को वापस बुलाकर पूछा–"सुनिये तो, मेरी शादी कौन करेगा? आप ही किसी कन्या को ठीक कर लीजियेगा।"
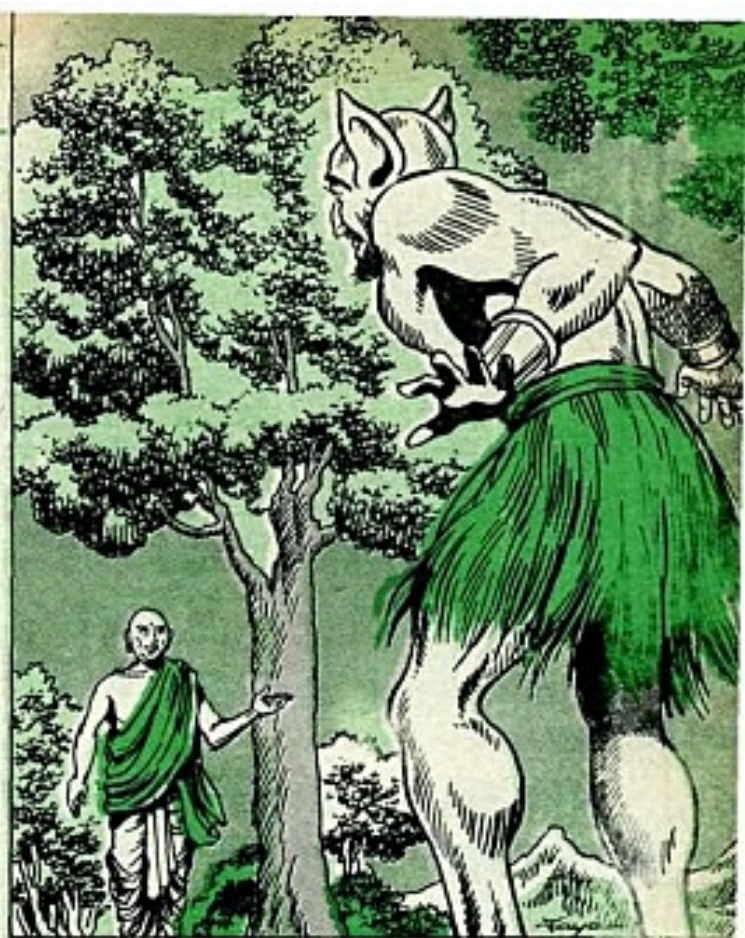
"इस वक़्त तो हमारी मानव जाति में भी तुम्हें मात करनेवाले कई आदमी हैं। कोई भी मनुष्य अपनी कन्या को बड़े घर में ब्याहना चाहेगा, लेकिन तुम जैसे भोले और गरीब के साथ शादी कराने को कौन तैयार होगा?" रामशास्त्री ने समझाया।

राक्षस के मन में शादी करने और अपनी ताक़त बढ़ाने की इच्छा तीव्र हो उठी। वह अब नरम पड़कर रामशास्त्री से गिड़गिड़ाने लगा।

बड़ी देर तक अपनी ऐंठ जताकर रामशास्त्री बोला–"सुनो भाई, यह काम आसान थोड़े ही है। इसके पीछे बहुत सारा धन खर्च होगा। अगर तुम यह

कहोगे कि यह बरगद का पेड़ ही तुम्हारा घर है तो कौन तुम्हें अपनी लड़की देगा ?"

"आप धन की फ़िक्र मत कीजियेगा। लड़की को खोजने में जो कुछ खर्च होगा, वह मैं आप को दे दूँगा। साथ ही आप को बहुत बड़ा इनाम भी दूँगा। शादी के बाद इस बरगद को छोड़ मैं बहुत बड़े महल में चला जाऊँगा।" इन शब्दों के साथ ब्रह्म राक्षस ने सोने के मोहरों से भरा घड़ा लाकर रामशास्त्री के हाथ दे दिया।

रामशास्त्री ने स्वीकृति सूचक सर हिलाकर कहा–"लेकिन मेरी एक शर्त है। जब तक मैं तुम्हारे वास्ते कन्या ठीक न करूँगा, तब तक तुम किसी मानव की आँखों में मत पड़ो। अगर यह मालूम हो जाएगा कि दूल्हे का निवास बरगद के पेड़ पर है, तो जो रिश्ते कायम होंगे, वे भी टूट जायेंगे। अलावा इसके तुम्हें देखनेवाले लोग यह प्रचार करे कि तुम कमजोर हो, तो कोई अपनी लड़की देने आगे नहीं आयेगा। वे लोग यही कहेंगे कि जब मनुष्यों के भीतर बड़े-बड़े धनी और ताक़तवर हैं, ऐसी हालत में उनकी कन्या को एक कमजोर राक्षस के गले मढ़ना उनकी इज्ज़त के लिए कलंक की बात है।"

इस पर ब्रह्म राक्षस को रामशास्त्री की बात उचित मालूम हुई। उसने रामशास्त्री को वचन दिया कि अपनी शादी के पूरा होने तक वह किसी मानव को दिखाई न देगा। इसके बाद किसी मानव ने ब्रह्म राक्षस को उस पेड़ पर नहीं देखा। आज अगर कोई बूढ़ा आदमी युवकों से यह बात कहे कि किसी जमाने में उस बरगद पर एक ब्रह्म राक्षस निवास करता था, तो युवक यही जवाब देते हैं–"आप लोगों के ये सब अंध विश्वास हैं।"

रामशास्त्री ब्रह्म राक्षस से प्राप्त सोने के मोहरे लेकर घर लौटा। अपने सारे क़र्ज चुकाये। दामादों की माँगों की पूर्ति की। बचे हुए धन के साथ मजे से अपने दिन काटने लगा।

क़िले के कुत्ते

सैंकड़ों साल पहले की बात है। काशी राज्य पर ब्रह्मदत्त शासन करते थे। उन दिनों में बोधिसत्व नगर के समीप के श्मशान में एक कुत्ते के रूप में पैदा हुए और वे सैंकड़ों कुत्तों के सरदार थे।

एक दिन राजा अपने रथ पर सवार हो सैर करने निकले और सूर्यास्त के समय तक अपने क़िले में लौट आये। परिचारकों ने रथ में जुते घोड़ों को ले जाकर घुडसाल में बांध दिये और रथ को राजमहल के अहाते में ला खड़ा किया। उस दिन रात को खूब पानी बरसा, जिस से रथ भीग गया। राजा के पालतू कुत्ते महल से उतर आये। रथ के चमड़े के उपकरणों को काट डाला।

दूसरे दिन सवेरे परिचारकों ने राजा को यह समाचार सुनाया। राजा क्रोध में आ गये और उन्होंने आदेश दिया—"कुत्तों ने क्या मेरे रथ की ऐसी हानि कर डाली? तुम लोगों की नज़र में जो भी कुत्ता पड़े, उसे मार डालो।"

राजा का आदेश होने के बाद राज्य के सभी कुत्ते मारे जाने लगे। कुछ कुत्ते बचकर बोधिसत्व के निवास करनेवाले श्मशान में गये और उनसे बिनती की—"महाशय, सुनते हैं कि राजा के रथ में बंधे चमड़े के उपकरणों को कुछ कुत्तों ने काट डाले हैं, इसलिए राजा ने सभी कुत्तों को मार डालने की आज्ञा दे रखी है।"

उन कुत्तों के मूँह से ये बातें सुनकर बोधिसत्व बड़े दुखी हुए। उन्होंने अपने मन में सोचा—'क़िले के अन्दर जो रथ है, उसके पास क़िले के बाहर के कुत्ते पहूँच नहीं सकते। इसलिए रथ से बंधे चमड़े के उपकरणों को क़िले के अन्दर रहनेवाले कुत्तों ने ही काट डाले होंगे। जिन कुत्तों ने

यह अपराध किया है, उन्हें राजा के हाथ पकड़वा कर मेरे परिवार के कुत्तों को बचाना होगा।"

यों विचार कर उन्हों ने कुत्तों को समाझाया–"तुम लोगों को डरने की कोई जरूरत नहीं है। मैं अभी राजा के दर्शन करके लौट आता है, तब तक तुम लोग यहीं पर रह जाओ।" फिर वे अपने मन में ये बातें दुहराते हुए क़िले में पहूँचे कि "धर्म की विजय हो! राजा न्याय का पालन करे।"

उस समय राजा दरबार में सिंहासन पर बैठे न्याय का फ़ैसला कर रहे थे। बोधिसत्व सिंहासन के नीचे से धुस कर राजा के सामने खड़े हो गये। राजसेवक उन्हें पकड़ने को हुए, लेकिन राजा ने उनको रोका।

बोधिसत्व ने राजा को प्रणाम कर के पूछा–"महाराज, मैं ने सुना है कि आप ने राज्य भर के कुत्तों को मार ड़ालने की आज्ञा दे दी है। मैं जानना चहता हूँ कि आखिर इसका कारण क्या है?"

राजा ने उत्तर दिया–"उन कुत्तों ने हमारे रथ से बंधे चमड़े के उपकरणों को काट ड़ाला है, इसीलिए हमें ऐसी आज्ञा जारी करनी पड़ी।"

"क्या आप जानते हैं कि यह अपराध करनेवाले कुत्ते कौन हैं?" बोधिसत्व ने पूछा।

राजा ने-सिर हिलाकर कहा–"नहीं, हम नहीं जानते!"

इस पर बोधिसत्व ने पूछा–"महाराज, जिन कुत्तों ने अपराध किया है, उन का पता लगाये बिना सभी कुत्तों को एक साथ मार ड़ालने का आदेश देना कहाँ का न्याय है? मैं यह जानना चाहता हूँ कि आप के सेवक सभी कुत्तों का वध कर ड़ालेंगे या कुछ कुत्तों को प्राणों के साथ छोड़ देंगे?"

राजा ने कहा–"राज्य भर के कुत्तों को मार ड़ालने का मैं ने आदेश दिया है, पर क़िले में रहनेवाले पालतू कुत्तों की किसी प्रकार की हानि नहीं होनी चाहिए।"

इस पर बोधिसत्व ने समझाया–"राजन, आप खुद नहीं जानते कि किन कुत्तों ने यह अपराध किया है, फिर भी आप ने क़िले के कुत्तों को छोड़ बाक़ी सब कुत्तों को मार ड़ालने का आदेश दिया है। आप पक्षपात, द्वेष, अविवेक और भय नामक चार दुर्गुणों से परेशान हैं। ये सभी लक्षण एक राजा में नहीं होने चाहिए।"

राजा थोड़ी देर तक सोचते रहे, तब पूछा–"तब तो तुम अपने बुद्धि-बल का उपयोग करके क्या यह बता सकते हो कि हमारे रथ के चमड़े के उपकरणों को किन कुत्तों ने खा डाला है?"

"यह अपराध तो क़िले के कुत्तों ने ही किया है। मैं यह बात साबित कर सकता हूँ।" बोधिसत्व ने जवाब दिया।

"अच्छी बात है, तुम सबित करो तो मैं अपने आदेश को वापस ले लूँगा" राजा ने बोधिसत्व को वचन दिया।

बोधिसत्व ने राजा से निवेदन किया कि वे थोड़ा छाछ और घास मंगवा ले। परिचारक तुरंत ले आये। तब बोधिसत्व ने घास को पिसवा कर छाछ में मिलवा दिया और क़िले के कुत्तों को पिलवाया।

एक-दो क्षणों के अन्दर क़िले के कुत्ते कै करने लगे। कुत्तों ने चमड़े के जो उपकरण खाये थे, वे अभी तक पचे न थे, इसलिए बाहर आ गये।

इस घटना को देख राजा अचरज में आ गये। तब बोधिसत्व ने कहा—"महाराज, आप के परिचारकों ने कुत्तों को ठीक से खाना नहीं खिलाया, इसीलिए भूख से परेशान हो उन कुत्तों ने आप के रथ के चमड़े के उपकरणों को काट कर खा ड़ाला।"

राजा परमानंदित हो दरबारियों को बताया—"ये तो कुत्ते के रूप में स्थित बोधिसत्व ही हैं। अन्य कोई नहीं।" यों कहकर उनके हाथ श्वेतछत्र देकर उसकी पूजा की। बोधिसत्व ने राजा को धर्म का उपदेश दिया, इसके बाद श्मशान में रहनेवाले अपने परिवार से मिलने चले गये।

इसके बाद राजा ने क़िले के कुत्तों की देखभाल करनेवाले परिचारकों को बुलवा भेजा, दरियाफ़्त करने पर उन्हें पता चला कि परिचारक धन का अपहरण करते हुए कुत्तों को भर पेट खाना खिलाते न थे, इस पर राजा ने उन्हें दण्ड दिया और कुत्तों की देखभाल करने के लिए नये सेवकों को नियुक्त किया।

उस दिन से राजा ने क़िले के कुत्तों को ही नहीं, राज्य भर के सभी कुत्तों को उचित खाना खिलाने का अच्छा इंतज़ाम किया। इसके बाद राजा ने बोधिसत्व के उपदेश सुनते हुए अपने जीवन में कई अच्छे कार्य किये।

बोधिसत्व ने कई वर्षों तक दुनिया के लोगों को धर्मोपश देते रहे और उन्हें मुक्ति का मार्ग बताया।

सच्ची विजय

भारत के इतिहास में अशोक (अशोक वर्द्धन) एक प्रमुख राजा थे। वे चन्द्रगुप्त मौर्य के पोते तथा बिंदुसार के पुत्र थे। उन्हीं के द्वारा बौद्ध धर्म का प्रचार संसार के कोने कोने में होने लगा।

राजा बिंदुसार के अनेक पत्नियां और कई पुत्र थे। एक बार एक मुनि के दर्शन करने के लिए सभी राजकुमार राजमहल के प्रांगण में इकट्ठे हुए और अपने-अपने आसनों पर बैठ गये। बालक अशोक जब वहां पहुँचे, तब उनके बैठने के लिए वहां पर कोई आसन न था।

अशोक जमीन पर लुढ़क पड़े। इतने में बिंदुसार मुनि को साथ लेकर आ पहुँचे। अशोक से पूछा गया कि तुम जमीन पर क्यों बैठे हो? अशोक ने यही जवाब दिया था–"भूमाता से बढ़कर कोई उत्तम आसन नहीं है, वह कभी धोखा नहीं दे सकती।"

मुनि ने राजा बिंदुसार को बताया कि अशोक के अन्दर कुछ अनोखे लक्षण हैं, इसलिए वह खूब चमक सकता है। अशोक जब बड़े हुए, तब बिंदुसार ने उन्हें मालव देश का शासक बनाकर उज्जैन भेजा।

ई. पूर्व २७३ में बिंदुसार की मौत हुई। यह ख़बर मिलते ही अशोक पाटलीपुत्र को चले आये। राजा ने यह घोषणा नहीं की थी कि उनके बाद गद्दी पर कौन बैठे? हालत अनिश्चित थी।

मगर अशोक के राजधानी में पहुँचते ही अनिश्चित स्थिति हट गई। वे अपनी शासन दक्षता को पहले ही साबित कर चुके थे। वे साहसी थे, शायद निर्दयी भी थे। उनका किसी ने विरोध नहीं किया। वे गद्दी पर बैठे।

अशोक उच्च विचार रखनेवाले थे। कुछ लोगों ने उनको चण्ड अशोक भी बताया। उनके मन में सम्राट बनने की बड़ी इच्छा थी। इसकी पूर्ति के लिए उन्होंने एक बड़ी सेना और समर्थ सेनापतियों का संगठन किया।
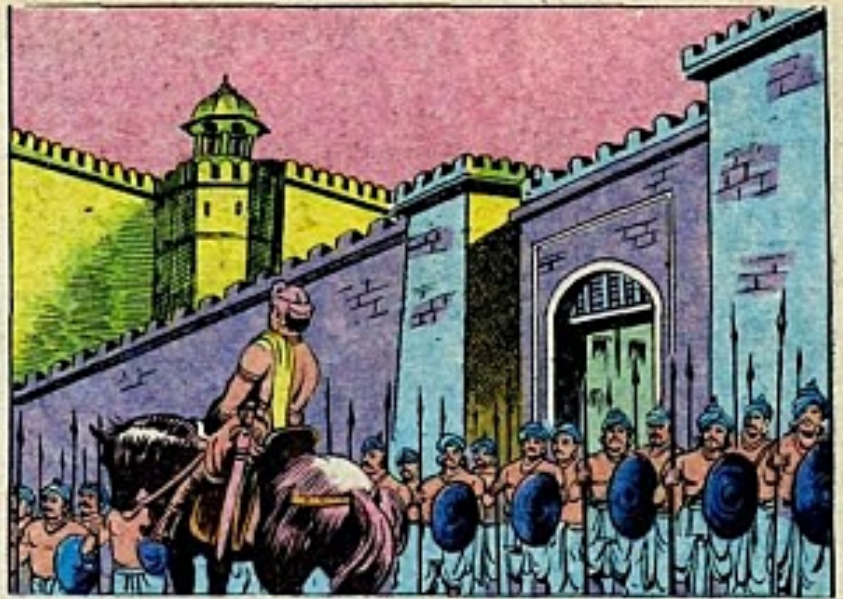
पहले उन्होंने छोटे-छोटे राज्यों को अपने राज्य में मिलाया, बाद को शक्तिशाली कलिंग देश पर हमला किया। कई दिनों तक भयंकर युद्ध चला। पर कलिंग सेना हारी नहीं, इस पर अशोक के सैनिकों ने कलिंग सेना पर दारुण हत्याकांड शुरू किया।

उस युद्ध में एक लाख सैनिकों को मरते अशोक ने एक पहाड़ पर से देखा। इससे भी दुगुने सैनिक घायल हुए। डेढ़ लाख सैनिक बन्दी बने। विजय पाने के बाद प्रसन्न होने के बदले अशोक चिंता में डूब गये।

तीव्र पश्चात्ताप को लेकर अशोक राजधानी को लौट आये । एक बौद्ध भिक्षु ने उन्हें समझाया–"सच्ची विजय तलवार से नहीं, प्रेम से प्राप्त होती है ।" यह उपदेश पाने के बाद अशोक के मन को शांति मिली ।

अशोक ने अपने मंत्री, सेनापति और सामंतों को बुला भेजा, सबके सामने यह घोषणा की कि वे सदा के लिए हिंसा को त्याग रहे हैं । तब वे शांति-दूत बन गये । सब को समझाया कि वे ज्ञान और प्रेम का प्रचार करे । इसके बाद वे धर्म अशोक के रूप में प्रसिद्ध हुए ।
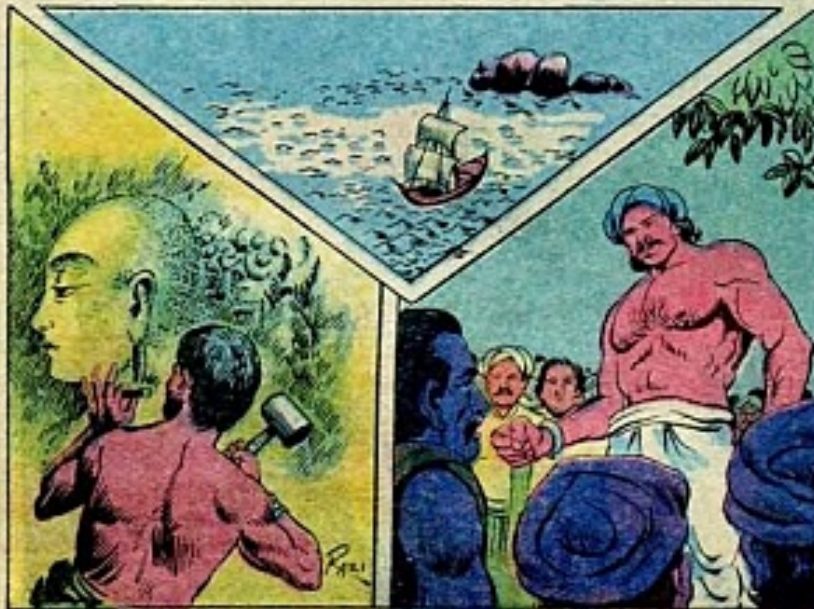
अशोक ने सारे देश के सामाजिक स्वरूप को बदल डाला । शिलालेखों द्वारा धर्म-सूत्रों का प्रचार किया । उनके पुत्र और पुत्री बुद्ध के संदेश को श्रीलंका में ले गये । इस धर्म के महामात्र और प्रचारकों ने धर्म पथ पर जनता को चलाया ।

झगड़े का अंत

गोमती और दुर्गाप्रसाद ने जब से घर बसाया तभी से दोनों के बीच झगड़े शुरू हुए। उनमें मनमुटाव का कारण वैसे कोई बड़ी-बड़ी बातें न थीं, बल्कि आज कौन-सी तरकारी बनानी है, किस मंदिर में जाना है, ऐसी छोटी-छोटी बातें हुआ करती थीं।

एक बार उन्हें अपने किराये का मकान बदलना पड़ा। दुर्गाप्रसाद की बड़ी दौड़-धूप के बाद आखिर उन्हें गाँव के छोर पर एक पुराना मकान किराये पर मिला। अच्छा मुहूर्त देखकर वे लोग उस मकान में चले गये।

एक दिन रात को दुर्गाप्रसाद कचहरी में अपना काम पूरा करके सब्जी व तरकारियाँ लेकर घर लौटा। खाने के वक़्त पति-पत्नी के बीच इस बात को लेकर चर्चा चल पड़ी कि कल सुबह कौन-सी तरकारी बनानी है। गोमती ने तुरई बनाने की बात कही, पर दुर्गाप्रसाद ने कहा कि भिंड़ी की तरकारी बनाओ।"

गोमती तुनक कर बोली–"मेरी हर बात को काटना तुम्हारी आदत-सी बन गाई है।"

"मेरी बात को तुम मानती कब हो?" दुर्गाप्रसाद ने उल्टा सवाल किया।

इतने में किसी ने दर्वाजे पर दस्तक दी। दुर्गाप्रसाद ने जाकर किवाड़ खोला। बाहर चाँदनी की रोशनी में कोई भिखारी झोला लटकाये दिखाई पड़ा। उसने दुर्गाप्रसाद से कहा – "मालिक, आप दोनों को झगड़ा करते मैं तभी से सुन रहा हूँ। आखिर यह झगड़ा ही क्यों? दोनों के लिए पसंद की दो तरकारियाँ बनवा लीजिए।"

"तुम से किस कमबख़्त ने सलाह माँगी? भाग जाओ।" दुर्गाप्रसाद ने डाँट बताई।

रवीन्द्रकुमार भुवाल्का

"रुक जाओ, भाई, ये खाना लेते जाओ।" यों कहते गोमती ने उसकी झोली में चावल और तरकारी डाल दी।

भिखारी खुशी-खुशी चला गया।

दूसरे दिन गोमती ने दो तरकारियाँ बनाईं। उस वक़्त खाने के समय दोनों के बीच कोई झगड़ा न हुआ। उस दिन रात को पति-पत्नी अपने दोस्त के घर शादी में जाने की बात को लेकर चर्चा करने लगे।

दुर्गाप्रसाद ने सुझाया — "तुम नीले रंग की साड़ी पहन लो। वह मुझे बड़ी अच्छी लगती है।"

"नही, मैं लाल साड़ी पहनूंगी। वही मुझे पसंद है।" गोमाती ने अपने मन की बात कही। इस बात को लेकर पति-पत्नी के बीच फिर झगड़ा शुरू हुआ।

इतने में दर्वाजे पर दस्तक हुई। गोमती ने जाकर दर्वाजा खोला। कल का वही भिखारी सामने खड़ा था।

"माईजी, नाहक़ ये झगड़े-फ़िसाद ही क्यों? आप दोनों कल दिन भर वहीं रहेंगे न? सुबह लाल साड़ी और शाम को नीली साड़ी पहन ले तो झगड़ा खतम!" भिखरी ने सुझाव दिया।

"तुम कौन हो बीच में दखल देनेवाले? हमारी बात हम खुद निबटा लेंगे। जाओ, भाग जाओ।" गोमती खीझ उठी।

"भाई, ठहर जाओ!" यों कहते दुर्गाप्रसाद ने जेब से कुछ पैसे निकाल कर भिखारी के बर्तन में डाल दिया।

भिखारी चुपचाप चला गया।

दूसरे दिन रात को पति-पत्नी घर लौट आये। उन्होंने देखा कि भिखारी मकान के बाहर चबूतरे पर सोया हुआ है।

पति-पत्नी खाना खाकर लौट चुके थे। इसलिए सिर्फ़ पानी पीकर लेट गये।

"अगर पैदा करना है तो लड़की को ही पैदा करना है। कन्यादान करके हम खूब पुण्य लूट सकते हैं। पुरोहितजी कह रहे थे कि कन्या दान करने पर कोटि पुण्यों का फल मिलता है।" गोमती बोली।

"छी: छी: यह तुम क्या कहती हो? आखिर कोई लड़की की कामना करता है? आजकल हमारे न चाहने पर भी लड़कियाँ बड़ी तादाद में पैदा होती जा रही हैं। लड़की को पैदा करने पर कितनी मुसीबतों का सामना करना पड़ता है, तुम क्या जानो! उसके वास्ते वर को ढूंढना है। भारी रक़म दहेज़ में देकर उसकी शादी करनी है, इतना सब कुछ करने के बाद भी वह पराये घर की बहू बन जाती है। अगर लड़के को पैदा करे तो वह बुढ़ापे में हमारा पालन-पोषण करेगा।" दुर्गाप्रसाद ने समझाया। इस बात को लेकर दोनों के बीच फिर झगड़ा शुरू हो गया।

इस बार फिर दर्वाजे पर दस्तक हुई।

दुर्गाप्रसाद ने दर्वाजा खोलते हुए पूछा– "क्यों भाई! तुम फिर हमें सलाह देने आये हो?" इसके बाद सामने खड़े व्यक्ति को देख दुर्गाप्रसाद चौंक पड़ा। क्योंकि वह कचहरी का कर्मचारी मातादीन था।

"मुझे देखकर आप ने किसे समझा? आज आप कचहरी में नहीं आये। आप का कर्ज चुकाने के लिए रुपये ले आया हूँ, लीजिए।" यों कहते मातादीन दुर्गा प्रसाद के हाथ एक पोटली देकर चला गया।

मातादीन के जाते ही दुर्गाप्रसाद दर्वाजा बंद करने जा रहा था, तब भिखारी प्रवेश करके बोला–"मालिक! आप से मेरी छोटी-सी विनती है! आप पति-पत्नी
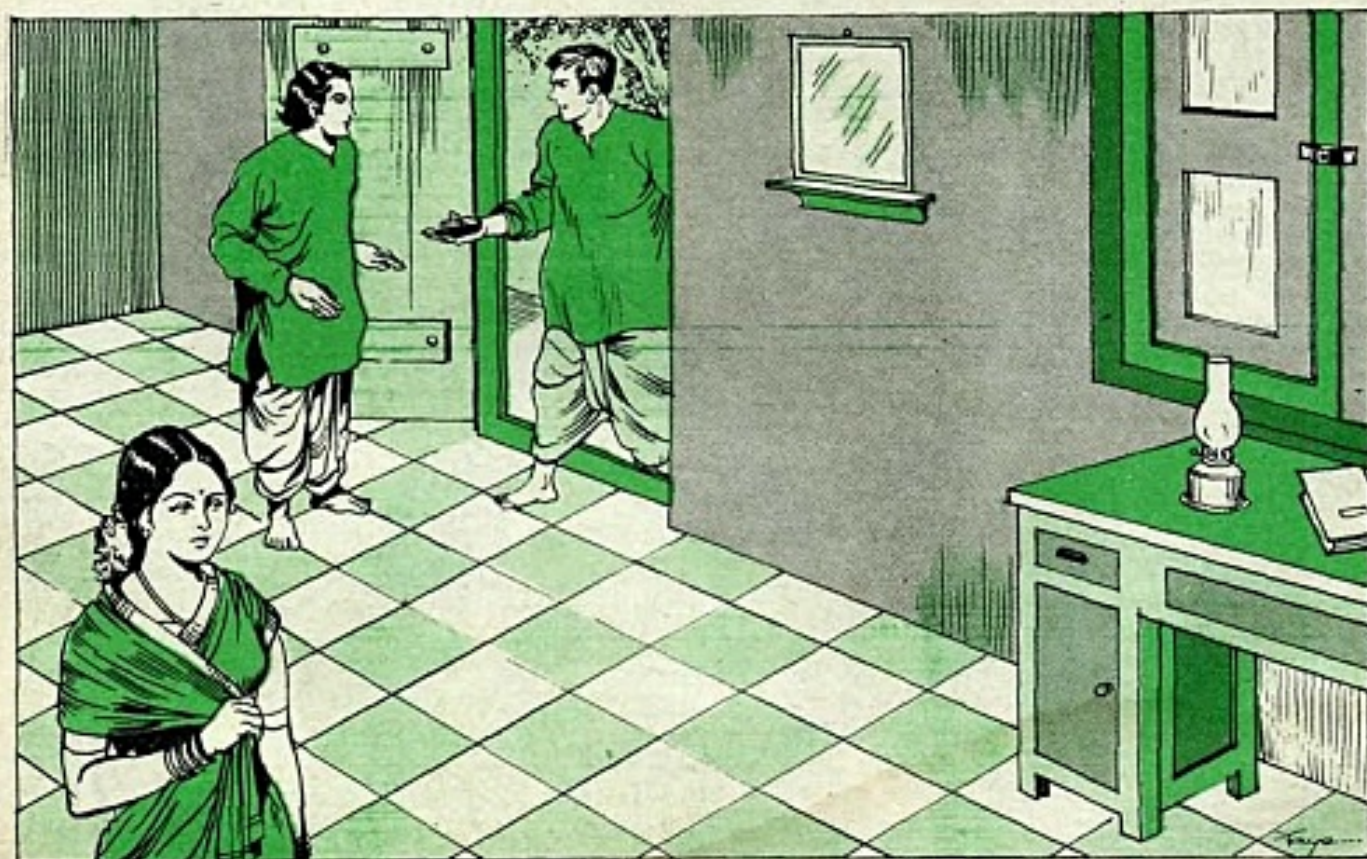
लड़का और लड़की को लेकर झगड़ रहे हैं न? इस वक़्त दूसरी गली में बसोर हरिराम और चूड़ीवाले जोगीन्दर की पत्नियाँ प्रसव पीड़ा से परेशान हैं। अगर आप दोनों ठीक मे यह बतायें कि किसे कौन सा शिशु पैदा होगा, बस, आप का झगड़ा समाप्त हो जाएगा।"

ये बातें सुनकर गोमती उछल पड़ी, बोली–"हरिराम के घर लड़की पैदा हो जाएगी। पर दुर्गाप्रसाद ने बताया कि जोगीन्दर के घर लड़का पैदा होगा।

उस दिन रात को जागते हुए दुर्गाप्रसाद प्रसव होने तक टहलता ही रह गया, लेकिन हरिराम के घर लड़का और जोगीन्दर के घर लड़की पैदा हुई।

भिखारी ने हँसते हुए कहा–"देखते हैं न? आप दोनों के सोचने के मुताबिक़ कुछ नहीं हुआ। किसके घर कौन सा बच्चा पैदा होगा, यह सब सृष्टि की माया है। सृष्टि की नज़र में नर और मादा दोनों बराबर हैं। इसलिए कृपया आप दोनों भविष्य में झगड़ा मत कीजिए। एक दूसरे को अच्छी तरह से समझकर सदा ख़ुश रहिये। तभी ज़िंदगी में सच्चे सुख और संतोष प्राप्त होंगे। मैं जब जिंदा रहा, तब मैंने कई परिवारों को सुधारा। आज भी मेरे भीतर यह इच्छा बनी हुई है, इसीलिए मैं इस रूप में हूँ।"

उसकी बातें सुनने पर पति-पत्नी डर के मारे कांप उठे। लगा कि वे बेहोश हो रहे हैं। फिर जब वे स्वस्थ हुए तो देखते क्या हैं? उनके सामने भिखारी न था।

इस घटना के कारण उन दोनों के मन में डर घर कर गया। उनका मकान गाँव के छोर पर था। चारों तरफ़ पेड़-पौधे हैं। मकान बदलना चाहे तो मुमकिन मालूम नहीं हो रहा है। इसलिए दोनों ने भूत से डरकर आपस में झगड़ना बंद किया। इसके बाद उन्हें लगा कि मानव जीवन कैसा आनंददायक है! इस ख़ुशी में वे धीरे-धीरे भूत को भूल गये, फिर कभी उन्हें वह भूत दिखाई नहीं दिया।

मनुष्य और कर्तव्य

रविवर्मा नामक एक युवक ने एक दिन राजा के दर्शन करके कोई नौकरी दिलाने की प्रार्थना की। राजा की दृष्टि में वह युवक एक सज्जन जैसा मालूम हुआ। इसलिए मंत्री को बुलाकर उसके योग्य कोई नौकरी देने का आदेश दिया। मंत्री ने उसे अपने कार्यालय में कोई नौकरी दी।

रविवर्मा को जो काम सौंपा गया, वह कई दिनों तक पूरा न हुआ, इसका पता लगने पर मंत्री ने दरियाफ़्त किया, तब उसे मालूम हुआ कि रविवर्मा एक बड़ा भक्त है और दिन-रात मंदिर में अपना वक्त बिताता है। मंत्री ने उसे बुलवाकर डांट दी।

रविवर्मा ने जवाब दिया—"महामंत्रीजी, मुझे जिस भगवान ने जन्म दिया, उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए ये दिन-रात काफी नहीं हैं।"

"ओह, ऐसी बात है? तब तो तुम्हें नौकरी देनेवाले राजा के प्रति भी अपनी कृतज्ञता प्रकट करते रहो।" मंत्री ने समझाया।

रविवर्मा को यह बात उचित मालूम हुई। वह रोज राजा के दर्शन करके उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने लगा। चार-पाँच दिन यह क्रम देखने के बाद राजा ने खीझकर उसे नौकरी से हटाया।

इस पर रविवर्मा ने मंत्री के दर्शन करके पूछा—"महानुभाव, मैंने आप की सलाह का पालन किया, तो मेरी नौकरी तक जाती रही।

"क्यों नहीं जायेगी? राजा ने तुम्हें नौकरी इसलिए दिलाई कि तुम मन लगाकर काम करो। भगवान ने भी तुम्हें इसलिए जन्म दिया कि तुम अपना कर्तव्य करो; पर राजा और भगवान की प्रशंसा करने के लिए नहीं।" यों मंत्री ने उसे खूब डांटा और फिर उसे नौकरी दी। इसके बाद रविवर्मा मन लगाकर काम करने लगा।

शिकायत का फल

चंपक देश की सीमा पर संबलपुर नामक गाँव में जयराम नामक एक गृहस्थ रहा करता था। उसके गौरीशंकर नामक भाई और लक्ष्मी नामक बहन भी थी। जयराम की पत्नी जानकी गौरीशंकर और लक्ष्मी के साथ बड़ा वात्सल्य पूर्ण व्यवहार करती थी। वह परिवार उस गाँव के लिए एक आदर्श परिवार बना था।

एक बार चंपक देश पर पड़ोसी देश के हमला करने की अफ़वाह फैल गई। इसलिए संबलपुर गाँव के लोग डरकर भाग गये। उन सब के साथ जयराम का परिवार भी दूसरे गाँव का प्रवासी बना।

जयराम को नई जगह, नई ज़िंदगी बसर करनी पड़ी। गौरीशंकर पढ़ाई में कच्चा निकला, पर जयराम अच्छा पढ़ा-लिखा था। जानकी संगीत जानती थी। दोनों ने मिलकर एक पाठशाला खोल दी। लक्ष्मी घर संभाल लेती थी। साथ ही हर काम में भाई और भाभी का हाथ बंटाती थी। गौरीशंकर समीप के जंगल में से जलावन और अन्य उपयोगी चीज़ें लाया करता था। एक साल के अन्दर जयराम ने थोड़ा धन बचाकर दो एकड़ जमीन खरीद ली। अब गौरीशंकर खेतीबाड़ी का काम देखने लगा।

इस बीच उस परिवार की हालत सुधर गई। जयराम ने एक मकान खरीदने का विचार किया। उस गाँव में एक मकान बिक्री के लिए था। उसकी कीमत भी ज्यादा न थी, फिर भी उसे खरीदने के लिए कोई तैयार न था। जयराम को उसके एक हितैषी ने समझाया—"दोस्त, तुम उस मकान को खरीदने की बेवकूफ़ी मत करो। उसके सामने रहनेवाली रमाबाई बड़ी खतरनाक औरत है।"

रामनाथ शुक्ल

एक औरत से डरकर सस्ते में मिलनेवाले मकान से हाथ धो बैठना जयराम को अच्छा न लगा, उसने वह मकान खरीद लिया और एक शुभ दिन देख गृह प्रवेश किया। गृह प्रवेश के उत्सव में सामने के मकानवाली रमाबाई ने भी भाग लिया। अपने घर के पास एक परिवार को आये देख वह बहुत खुश हुई।

रमाबाई के घर में वह और उसका पति मात्र थे। उनके कोई संतान न थी। वैसे उनके कई रिश्तेदार थे, उनसे रमाबाई की बनती न थी। रमाबाई ने जानकी के साथ दोस्ती की। यह दोस्ती कुछ दिन तक अच्छी चली।

जानकी अपने घर पर बच्चों को संगीत सिखाती थी। जयराम बच्चों को पढ़ाया करता था। लक्ष्मी रसोई और घर के अन्य सारे काम-काज देखा करती थी। गौरीशंकर सवेरे ही उठकर खेत में चला जाता और रात को ही घर लौट आता था।

रमाबाई रोज लक्ष्मी को अपने घर बुला ले जाती और इधर-उधर की बातें करती थी। कभी सहानुभूति दिखाते हुए कहती—"बेटी, तुम इस छोटी सी उम्र में ही सारा काम कर देती हो, तुम्हारी भाभी बैठे-बैठे सिर्फ़ संगीत सिखलाया करती है, उसे दूसरा काम-धंधा ही क्या है?"

"आप ऐसी बातें मत कहियेगा, मेरी भाभी तो एक देवी हैं। अगले साल वह मेरी शादी करना चाहती हैं। घर के सारे काम संभालना सिखलाने के लिए उन्होंने मुझे यह जिम्मेदारी का काम दिया है। मेरी भाभी मेरी ज़रूरत की सारी चीज़ें ख़रीदकर दे देती हैं।" यों लक्ष्मी ने विनयपूर्वक जवाब दिया।

"तुम्हारी जैसी ननद किसी को भी पूर्व जन्म के पुण्य से ही मिल जाती है। यह तो तुम्हारी भाभी की क़िस्मत है कि तुम जैसी ननद उसे मिल गई! फिर भी न मालूम तुम जैसी अबोध लड़की कैसे अपनी ज़िंदगी काटेगी?" इन शब्दों के साथ

रमाबाई ने लक्ष्मी के प्रति सहानुभूति जताई।

ये सहानुभूति की बातें शुरू में लक्ष्मी के दिल पर असर डाल नहीं पाईं। मगर धीरे धीरे उसके दिल में यह शंका पैदा होने लगी कि वह तो एक बेवकूफ़ लड़की निकली, इसीलिए उसकी भाभी उससे कसकर काम लेती है। इस शंका के पैदा होने के बाद लक्ष्मी को उसकी भाभी एक चालाक औरत जैसी मालूम होने लगी।

रमाबाई ने गौरीशंकर के प्रति भी कुछ ऐसी सहानुभूति दिखाई–"बेटा, तुम को कोई भी जयराम का छोटा भाई नहीं मानते, सब कोई तुम्हें उसका नौकर ही समझते हैं।"

"मैं क्या कर सकता हूँ? मैं तो पढ़ा-लिखा नहीं हूँ। यूं ही बैठे रहना मुझे अच्छा नहीं लगता। भाई साहब मुझ से बड़ा प्रेम रखते हैं। कोई मेरे बारे में अगर कुछ समझें तो इससे मेरा बनता-बिगड़ता क्या है?" गौरीशंकर ने जवाब दिया।

"गाँव भर के बच्चों को पढ़ानेवाले तुम्हारे भाई क्या तुम्हें पढ़ा नहीं पाये? फिर भी अगर तुम पढ़-लिख लोगे तो तुम्हारे भाई की चाकरी कौन करेगा? इसीलिए तुम्हें पढ़ने का मौका नहीं दिया।" रमाबाई ने कहा।

धीरे-धीरे रमाबाई की तीखी बातें गौरीशंकर पर भी असर डालने लगीं।

उसने अपनी यह हालत बहन लक्ष्मी को सुनाई। लक्ष्मी ने अपनी राम कहानी गौरीशंकर को सुनाई। दोनों ने यह निर्णय कर लिया कि उस घर में उन दोनों के प्रति अन्याय हो रहा है।

लक्ष्मी भी थोड़ा-बहुत संगीत जानती थी। उसने एक दिन अपनी भाभी जानकी से कहा–"भाभीजी, घर के काम-काज करने में मुझे खीझ हो रही है। कुछ दिन तुम घर के काम-काज संभालो और मैं संगीत सिखाऊँगी।"

जानकी ने लक्ष्मी की बात झट मान ली।

गौरीशंकर ने भी अपने बड़े भाई को समझाया–"भैया, इधर मेरी तबीयत ठीक नहीं रहती। मैं कुछ दिन घर पर रहकर पढ़ लूँगा। खेत का काम देखने के लिए हम किसी नौकर को रख लेंगे।"

जयराम ने अपने भाई के सुझाव को खुशी के साथ मान लिया।

जानकी घर के सारे काम बड़ी आसानी से संभालती जा रही है, मगर लक्ष्मी संगीत पढ़ा नहीं पा रही थी। वह बार-बार बच्चों पर खीझ उठती थी कि वह जो कुछ सिखाती है, उसे बच्चे जल्दी सीख नहीं पा रहे हैं। इससे तंग आकर कई बच्चों ने संगीत सीखने के लिए आना बंद कर दिया। इस वजह से उनकी आमदनी घट गई।

साल भर घर पर बैठने के बावजूद भी गौरीशंकर कुछ पढ़ न पाया। उधर

खेतीबाड़ी में नौकर दिल नहीं लगाता था। इस कारण खेती से मिलनेवाली आय भी घट गई। जो आय होती थी, उसमें से थोड़ा हिस्सा नौकर के वेतन में खर्च हो जाता था। इन कारणों से जानकी उस साल लक्ष्मी को जो चन्द्रहार बनवाना चाहती थी, वह बनवा नहीं सकी। जयराम जो एक एकड़ जमीन ख़रीदना चाहता था, वह भी ख़रीद न पाया।

जानकी ने लक्ष्मी को अपने निकट बुलाकर समझाया—"तुम बच्चों को संगीत मत सिखाओ, अगर तुम्हें घर का काम बोझीला है तो मैं इस काम के साथ संगीत भी बच्चों को सिखलाऊँगी।"

उधर जयराम ने भी अपने छोटे भाई को बुलाकर समझाया—"तुम्हारी तबीयत के सुधरने तक मैं खेती का काम खुद संभालते हुए बच्चों को पाठ भी पढ़ाऊँगा।"

उस दिन से लेकर जयराम और जानकी का काम काफी बढ़ गया। उधर रमाबाई से बात करने को गौरीशंकर और लक्ष्मी को भी काफी फ़ुरसत मिलने लगी। रमाबाई हमेशा उन दोनों की तारीफ़ किया करती थी।

जयराम और जानकी को मालूम हो गया था कि रमाबाई की वजह से ही गौरीशंकर तथा लक्ष्मी के अंदर यह परिवर्तन हो गया है। पर दोनों ने यही सोचा कि अपने अच्छे व्यवहार के द्वारा ही उनके भीतर परिवर्तन लाना है। लेकिन उनका प्रयत्न सफल न हुआ। इसलिए जयराम ने एक उपाय सोचा।

एक दिन जयराम और जानकी ने ऐसा अभिनय किया, मानो वे गुप्त रूप से कोई रहस्य की बातें कर रहे हो। लक्ष्मी और गौरीशंकर ने उनकी बातचीत सुन ली। जयराम और जानकी ने इस प्रकार जोर-शोर से वार्तालाप किया जिससे लक्ष्मी और गौरीशंकर के कानों में पड़े। जानकी कह रही थी—"लक्ष्मी तो काम-काज करना चाहती है, मगर उसे मेरी

मदद करना पसंद नहीं है। रमाबाई नहीं जानती कि हम एक दूसरे पर जान देती हैं, इसलिए वह लक्ष्मी के प्रति मुझसे शिकायत करती है। वह समझती है कि मैं उसकी बातों पर यक़ीन करूँगी।"

"मुझे गौरीशंकर के बारे में भी रमाबाई ने ये ही बातें बताईं। लेकिन मैंने उसकी बातों पर यक़ीन नहीं किया।" जयराम बोला।

"सुनते हैं कि लक्ष्मी मेरी बात की अपेक्षा रमाबाई की बातों पर ज्यादा विश्वास करती है। अगर वह कहे तो लक्ष्मी मुझे झाड़ू से मारने के लिए भी तैयार हो जाएगी! अगर लक्ष्मी को यह बात मालूम हो जाय तो लक्ष्मी ही रमाबाई को झाड़ू से मार बैठेगी।" जानकी ने कहा।

"रमाबाई कह रही थी कि उसके कहने पर गौरीशंकर मेरे बाल पकड़कर मुझे गली में घसीट ले जाएगा। लेकिन रमाबाई शायद यह बात नहीं जानती कि गौरीशंकर को यह बात मालूम हो जाएगी तो वही रमाबाई के बाल पकड़कर गली में घसीट ले आएगा।" जयराम ने कहा।

यों पति-पत्नी ने देर तक बातें कीं। थोड़ी देर बाद दोनों ने कमरे से निकलकर देखा, बाहर लक्ष्मी और गौरीशंकर नहीं थे। गली में कोई कोलाहल मच रहा था। पति-पत्नी ने गली में आकर देखा, तब उनके आश्चर्य की कोई सीमा न थी। तब तक वहाँ पर बड़ी भीड़ जमा हो गई थी और सब लोग यह तमाशा देख रहे थे।

गौरीशंकर रमाबाई के बाल पकड़कर गली में खींच लाया, लक्ष्मी उसकी पीठ पर झाड़ू बरसा रही थी। जयराम दौड़कर वहाँ पहुँचा और लक्ष्मी तथा गौरीशंकर को अपने घर के भीतर खींच ले आया।

दूसरे ही दिन रमाबाई और उसका पति अपना मकान बेचकर घर खाली करके कहीं चले गये। क्योंकि जिस परिवार के लोग आपस में हिल मिलकर स्नेह से रहते हैं, उस मकान के सामने रमाबाई जैसी औरतें नहीं रह सकती थीं।
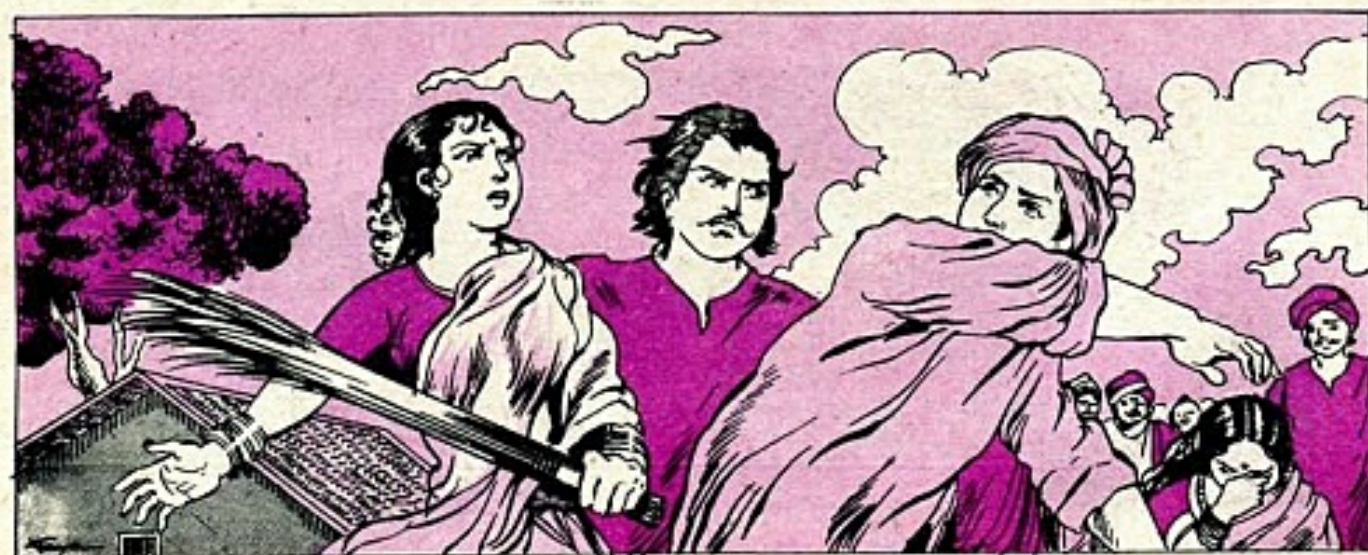
बुद्धिमान मंत्री

विजयपुरी में नरसिंग नामक डाकू बराबर चोरी और हत्याएँ करके राजभटों से बचता आ रहा था। इसलिए राजा ने यह ढिंढोरा पिटवाया कि जो आदमी उस डाकू को पकड़ा देगा, उसे सौ सोने के मोहर दिये जायेंगे।

एक दिन रामसहाय नामक एक किसान तड़के उठकर खेत में जा रहा था, तब उस गाँव में आनेवाले दो मुसाफ़िरों को कोई डाकू रोककर उन्हें लूट रहा था। रामसहाय ने सोचा कि वही डाकू होगा, तब वह एक पेड़ के पीछे जा छिपा और अपना पगहा फेंककर डाकू को पकड़ लिया और उसे खींचते राजा को सौंपने चल पड़ा।

रामसहाय के सामने से शिवप्रसाद नामक एक और किसान गुजरा। उसने पूछा– "रामसहाय, आख़िर बात क्या है?" इस पर रामसहाय ने बताया कि उसने डाकू को पकड़ लिया है, राजा के पास ले जायगा तो उसे एक सौ मोहरे इनाम देंगे। फिर क्या था, झट शिवप्रसाद ने रामसहाय के सर पर लाठी चलाई, उसके बेहोश होते ही शिवप्रसाद डाकू को पकड़कर राजा के पास पहुँचा।

उधर शिवप्रसाद को जब राजा के दर्शन हुए, इस बीच रामसहाय होश में आया और वह भी राजदरबार में पहुँचा। दोनों ने राजा से निवेदन किया कि मैंने पहले डाकू को पकड़ा है, मैंने पकड़ा है। इस पर राजा आश्चर्य में आ गये और उन्होंने मंत्री की ओर देखा। मंत्री ने डाकू को अपने निकट बुलवाकर कहा–"महाराज, यह डाकू नहीं, हमारे दरबारी ज्योतिषी का पुत्र है।" दूसरे ही क्षण शिवप्रसाद ने कहा–"महाराज, डाकू को पकड़नेवाला आदमी मैं नहीं हूँ। इसी रामसहाय ने पकड़ लिया है।" इसके बाद राजा ने शिवप्रसाद को बीस कोड़े लगवाये और रामसहाय को सौ मोहरे दिये।
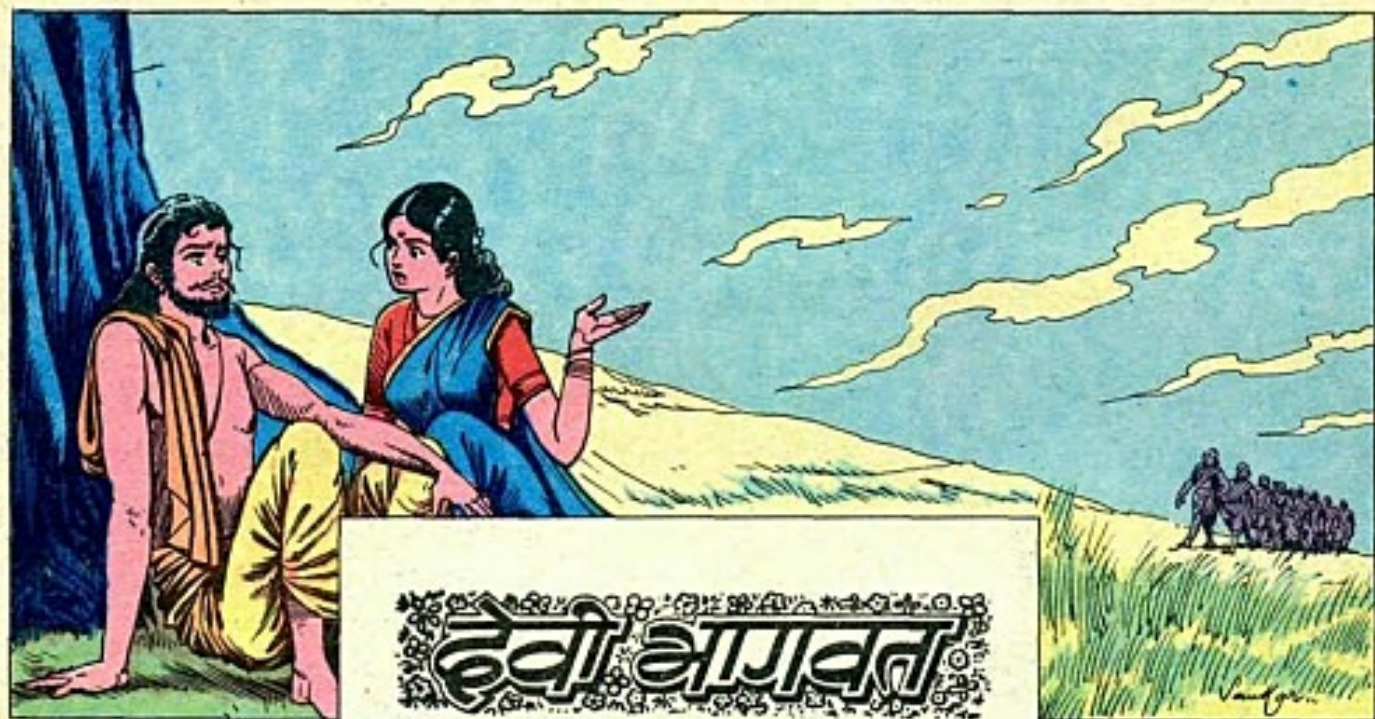
हरिश्चन्द्र की पत्नी रो पड़ी। उसकी समझ में न आया कि सारे देश पर शासन करके ब्राह्मणों को अपार धन-संपत्ति दान करके सत्यवान के रूप में यश पाने के साथ सब लोगों के द्वारा इंद्र और विष्णु के समान माने जानेवाले हरिश्चन्द्र की ऐसी बुरी हालत क्यों हो गई? इस दुखावेश में शैब्या बेहोश हो गई।

इधर माता-पिता यों बेहोश थे, उधर पुत्र रोहित को भूख की पीड़ा सता रही थी। उसकी जीभ सूखी जा रही थी। ऐसा मालूम होता था कि कुछ खाने पर ही उसके प्राण टिक सकते हैं। वह रोते हुए अपने माता-पिता से खाने के लिए कोई चीज़ माँग रहा था।

उसी समय विश्वामित्र यमराज के रूप में आये, बेहोश हुए हरिश्चन्द्र के मुँह पर पानी छिड़क दिया, रौद्र रूप धरकर पूछा—"तुम अपने वचन का पालन करना चाहते हो तो तुरंत मेरी दक्षिणा मुझे चुका दो। सूर्यास्त के अन्दर अगर तुम मेरी दक्षिणा नहीं चुकाओगे, तो मैं निश्चय ही तुम्हें शाप दे दूंगा।"

विश्वामित्र यों चेतावनी दे चले गये। इसके थोड़ी देर बाद एक वेदाध्यायी ब्राह्मण उधर आ निकला। उस ब्राह्मण को देख शैब्या अपने पति से बोली—"यह ब्राह्मण कई लोगों को साथ लेकर चला आ रहा है। शायद उससे माँगने पर वह धन दे? राजा तो शेष तीनों वर्णवालों के लिए

२७. राजवंशी दास

पिता के समान होते हैं। इसलिए मैं समझती हूँ कि अपने पुत्रों से धन स्वीकार करने में कोई दोष न होगा।"

इस पर हरिश्चन्द्र बोले—"क्षत्रियवंशी मैं अपना हाथ फैलाकर कैसे याचना कर सकता हूँ? दान लेने का अधिकार सिर्फ़ ब्राह्मणों को ही है। वे तो बाक़ी तीनों वर्णवालों के गुरु होते हैं। गुरुओं से याचना नहीं करनी है न?"

"काल और योग के अनुसार ही मान और अपमान, दान लेना व देना हुआ करते हैं! वरना धर्म की रक्षा करनेवाला ब्राह्मण कहीं ऐसा अन्याय कर सकता है?" रानी ने कहा।
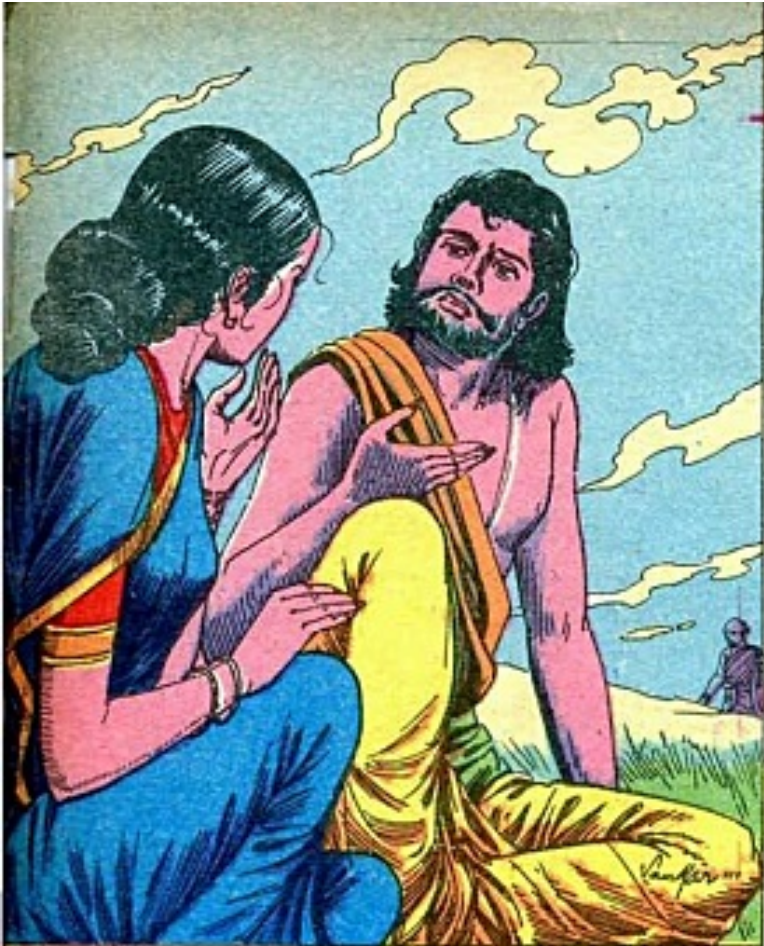
हरिश्चन्द्र ने रोष में आकर कहा—"देवी, मैं कटार से अपनी जीभ भी काट सकता हूँ, पर दूसरों के आगे हाथ फैलाकर 'देही!' कहकर दान माँग नहीं सकता। त्रिशंकु के पुत्र के अन्दर ऐसी दीनता? हो सका तो मैं अपने बाहु बल से धन का संपादन कर सकता हूँ, लेकिन याचना करके धन ग्रहण नहीं कर सकता।"

"याचना करने पर अगर आप को कोई आपत्ति हो तो मुझे बेचकर आप अपने यश की रक्षा कीजिए। पत्नी को बेचे, सिंहासन पर बिठावे या उतार दे, पत्नी नामक वस्तु काम दे सकती है न?" शैब्या बोली। इस पर हरिश्चन्द्र का दुख उमड़ पड़ा।

शैब्या हरिश्चन्द्र को सांत्वना देते हुए बोली—"आप जुआ खेलने, दारू पीने या सुख-भोगों के वास्ते अपनी पत्नी को नहीं बेच रहे हैं। ऐसी हालत में क्या सत्य की रक्षा करने के लिए मुझे बेच दे तो कोई दोष होगा?" यों कई प्रकार से हरिश्चन्द्र को समझाकर उन्हें मनवाया।

इस पर हरिश्चन्द्र ने अपनी पत्नी से कहा—"अच्छी बात है, मैं तुम्हारी बात मानकर यह काम करूँगा। क्या किसी भी युग में ऐसा कोई पापी होगा, जिसने अपनी पत्नी को बेच डाला हो? मैं

बदक़िस्मत हूँ, इसीलिए सब के सामने सिर झुकानेवाला काम करूँगा।"

इसके बाद हरिश्चन्द्र ने अपनी पत्नी को एक स्थान पर खड़ा किया और रास्ते चलनेवालों को देख गद्गद स्वर में यों कहा–"हे नागरिको! हे कृपालू सज्जनो! यह मेरी धर्मपत्नी है। अगर कोई इसे खरीदना चाहे, तो मैं बेचूंगा। उचित मूल्य चुकानेवाले हो तो आगे आइये।"

जल्द ही हरिश्चन्द्र के चारों तरफ़ लोगों की बड़ी भीड़ लग गई। कई लोगों ने एक साथ पूछा कि उन्हें अपनी पत्नी को बेचने की ज़रूरत क्यों आ पड़ी है?

हरिश्चन्द्र ने उन्हें समझाया–"महाशयो, मैं एक पापी हूँ। मेरा नाम लेने से ही आप लोगों को पाप लग सकता है। ऐसे व्यक्ति का परिचय आप क्यों पाना चाहते हैं? चाहो तो इसका उचित मूल्य चुकाकर खरीद लीजिए।"

उस वक़्त विश्वामित्र एक दूसरे बूढ़े ब्राह्मण के रूप में प्रवेश करके बोले–"मेरे पास धन की कोई कमी नहीं है। मेरी पत्नी बड़ी कोमल शरीरवाली है। वह घर के काम-काज कर नहीं पा रही है। तुम जितना भी धन माँगोगे, दे दूंगा। क्या सचमुच तुम तुम्हारी पत्नी को बेच दोगे?"

हरिश्चन्द्र को मौन देख विश्वामित्र फिर बोले–"शास्त्र बताते हैं कि बत्तीस लक्षणोंवाली स्त्री का मूल्य एक करोड़ मुद्राएँ हैं और पुरुष का मूल्य एक अर्बुद (एक हज़ार करोड़) है। इसलिए मैं इस नारी को उसी मूल्य पर ख़रीदकर अपने घर ले जाता हूँ।"

इस पर भी हरिश्चन्द्र मौन रहें।

ब्राह्मण को क्रोध आया। उसने हरिश्चन्द्र के आगे धन का ढेर लगाया, तब शैब्या से बोला–"अब तुम मेरी हो, चलो, मेरे साथ!" यह कहते उसके बाल पकड़कर खींचा।

अपने को जबर्दस्ती खींचकर ले जानेवाले ब्राह्मण से रानी बोली–"महाशय, मुझे

हज़ार करोड़ चुकाकर माँ-बेटे को अपने साथ चलने का आदेश दिया।

उस गृहिणी ने अपने पति की प्रदक्षिणा की, तब उनके चरणों पर सर रखकर रोते हुए बोली–"मैं चाहे जितने भी जन्म धारण करूँ, ये ही मेरे पति बने।"

हरिश्चन्द्र यह बात सोच न पाये कि भविष्य में होनेवाले कष्टों का वह उनके अभाव में कैसे सामना कर सकेगी? और कैसे जियेगी? इस बात का भी उन्हें दुख हुआ कि उनका पुत्र उनसे दूर होता जा रहा है। उन्हें राज्य त्याग की अपेक्षा पुत्र-त्याग बड़ा दुखदायी मालूम हुआ।

वह ब्राह्मण अपने गुलामों को पीटकर ले जा रहा था, यह देखकर भी हरिश्चन्द्र कुछ न कर पाये। उनका दुख दुगुना हो गया। उस हालत में विश्वामित्र अपने शिष्यों के साथ प्रवेश करके बोले–"अगर तुम झूठ बोलना नहीं चाहते तो मेरी दक्षिणा मुझे इसी वक़्त चुका दो।'

हरिश्चन्द्र ने अपनी पत्नी और पुत्र को बेचने से जो धन मिला था, उसे विश्वामित्र के हाथ दे दिया। पर विश्वामित्र ने कहा कि यह धन उसकी दक्षिणा के लिए पर्याप्त नहीं है। इस पर शेष धन के लिए वह शाम तक अवधि देकर चला गया।

छोड़ दो। मैं अपने पुत्र को छोड़कर नहीं रह सकती; मैं पतिव्रता हूँ। मुझे मत छुओ।"

इस पर बालक रोहित भी अपनी माँ के पीछे चलते "माँ! माँ!" पुकारते रो पड़ा। ब्राह्मण ने उसे डांटकर पीटते हुए कहा–"तुम लौट जाओ।"

इस दृश्य को देख हरिश्चन्द्र की पत्नी बोली–"महाशय, मेरे पुत्र को भी ख़रीद लो। वह मेरा इकलौता बेटा है। उससे दूर रहकर दिल लगाकर मैं काम-काज नहीं कर सकती।"

ब्राह्मण ने यह बात मान ली। रोहित पुरुष था। इसलिए उसका मूल्य एक

इसके बाद हरिश्चन्द्र अपने आप को बेचने के लिए तैयार हो गये। इतने में एक विकृत आकृतिवाला चाण्डाल उधर से आ निकला। उसने हरिश्चन्द्र से पूछा–"सुनो, मैं प्रवीर नामक एक चाण्डाल हूँ। मेरे अधीन काम करोगे? तुम्हारा काम होगा–शवों पर से कपड़े हटाने का! समझें।"

हरिश्चन्द्र ने जवाब में कहा–"मैं सिर्फ़ ब्राह्मण और क्षत्रिय लोगों के हाथों में ही बिक सकता हूँ।"

"तुमने बिक जाने की बात बताई, अब अपना वचन भंग करते हो? झूठ बोलने के सामने हजारों मार्ग जो हैं!" प्रवीर ने कहा।

हरिश्चन्द्र ने सोचा कि झूठ बोलनेवाला कहलाने की अपेक्षा चाण्डाल के हाथ बिक जाना ही श्रेयस्कर है। इतने में अपना कर्ज वसूल करने के लिए विश्वामित्र वहाँ आ धमके। अब हरिश्चन्द्र को बिक जाना लाजमी हो गया। उस हालत में हरिश्चन्द्र विश्वामित्र के पैरों पर गिरकर बोले–"महानुभाव! मैं दूसरों के हाथ क्यों बिक जाऊँ? आप ही के हाथों में बिक जाऊँगा। आप अपने ऋण के अंतर्गत मुझे खरीद कर मुझसे अपने मनमाने काम करवा लीजिए!"
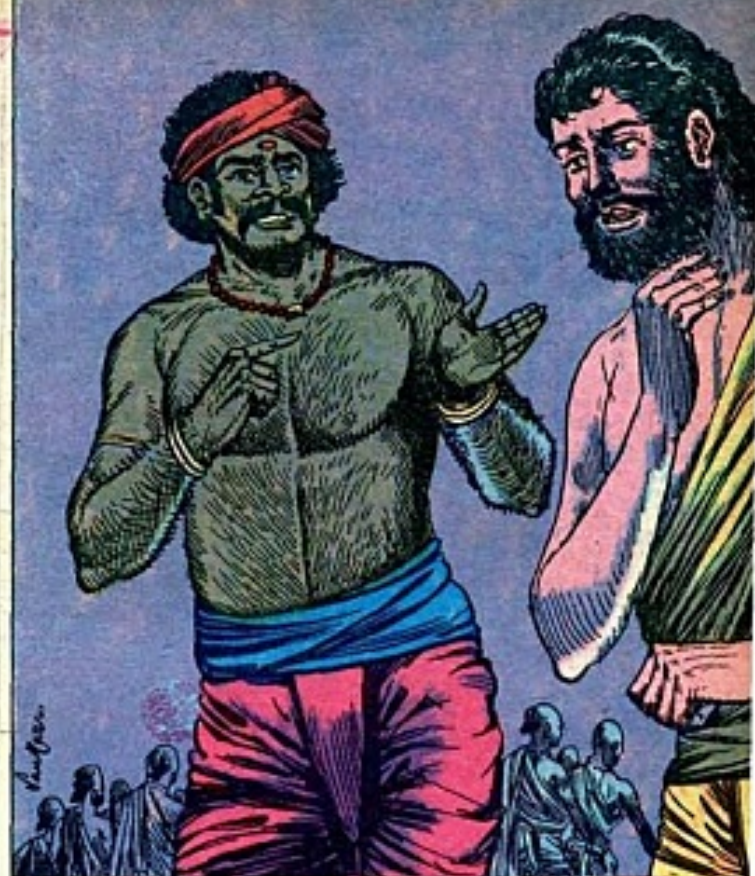
"ओह, ऐसी बात है!" फिर विश्वामित्र चाण्डाल से बोले–"यह आदमी मेरा गुलाम बन गया है। मगर इससे मेरा काम कहीं है। मुझे तो धन चाहिए। इसको तुम्हीं खरीद लो।"

इस पर प्रवीर ने विश्वामित्र को हज़ारों की संख्या में अमूल्य रत्न, मोती तथा अपार सोना देकर हरिश्चन्द्र को अपने दास के रूप में खरीद लिया। चाहे जिस किसी भी रूप में क्यों न हो, हरिश्चन्द्र आखिर अपने ऋण से मुक्त हो गये।

चाण्डाल ने सोचा कि हरिश्चन्द्र भाग जायेंगे, इसलिए उनको रस्सियों से बांधकर

तब अपने साथ ले गया। चार दिन तक हरिश्चन्द्र को उन बंधनों में ही रखा, इसके बाद उनके बंधन खोलकर चाण्डाल ने लाशों पर के कपड़े उतारने के काम पर नियुक्त किया।

नगर के दक्षिण में श्मशान था। हरिश्चन्द्र वहाँ पर पहुँचे। उनका काम था–जो शव वहाँ पर लाये जाते हैं, उन्हें जलाने के लिए शुल्क वसूल करना। दिन रात वहाँ पर लाये जानेवाले शवों पर निगरानी रखना।

दिन बीतते गये। एक दिन रोहित अपने मालिक ब्राह्मण के वास्ते समिधाएँ जुटाने चला गया। एक बांबी पर चढ़ गया, तभी एक साँप ने उसे काटा, वह बेहोश हो गिर पड़ा। यह खबर उसकी माँ को पहुँची। वह दहाड़े मारकर रोने लगी, तब उसके मालिक ब्राह्मण डांटते हुए बोले–"बहुत सारा धन चुकाकर तुम्हें रोने के लिए मैंने नहीं खरीदा! रोते हुए लोटने के लिए नहीं, समझे?"

ये बातें शैब्या की समझ में न आईं। वह और जोर-शोर से रोने लगी। मगर वह ब्राह्मण आधी रात तक उससे काम करवाकर तब उसे अपने बेटे को देखने के लिए मान गया। शैब्या के चलते वक़्त वह फिर बोला–"तुम सवेरा होने के पहले ही अपने बेटे की लाश को जलाकर जल्दी लौट आओ।"

आधी रात के वक़्त शैब्या अपने बेटे की खोज में चल पड़ी। रोहित के शव को देख वह फूट-फूटकर रो पड़ी। उस वक़्त वहाँ पर बधिक पहुँचे, बोले–"यह तो बच्चों को मारकर खानेवाली पिशाचिनी मालूम होती है।" फिर उसके बाल पकड़कर खींचते चाण्डाल के श्मशान में ले गये। तब प्रवीर (वीर बाहू) से बोले–"तुम इस औरत का वध करो।" प्रवीर ने अपने गुलाम हरिश्चन्द्र को बुलाकर उसके हाथ तलवार देकर उस नारी का वध करने को कहा।

हरिश्चन्द्र अपनी पत्नी को पहचान न पाये, वे बोले–"देवी! मैं तुम्हारा सर काटने जा रहा हूँ।"

"महाशय, मेरा पुत्र मर गया है। उसे लाकर जलाने तक कृपया रुक जाओ।" वह औरत बोली।

धर्म भाव रखनेवाले हरिश्चन्द्र ने उसकी बात मान ली।

शैब्या अपने पुत्र के शव को ले आई और रोते बैठ गई। हरिश्चन्द्र ने अपने नियमानुसार शव पर के कपड़े को उतार डाला।

लेकिन धीरे धीरे हरिश्चन्द्र को मालूम हो गया कि वह नारी उन्हीं की पत्नी है। तब तो वह मरा हुआ लड़का उनका ही पुत्र है। वे भी अपने दुख को रोक न पाये, रो पड़े। शैब्या ने भी समझ लिया कि वही उसका पति है। दोनों ने समझ लिया कि आखिर उनकी यह क्या हालत हो गई। हरिश्चन्द्र अपने पुत्र के शव से लिपटकर बेहोश हो गये।

इसके बाद शैब्या ने अपनी सारी यातनाएँ हरिश्चन्द्र को कह सुनाईं। उसने यह भी बताया कि वह अपना कर्तव्य करे और उसका सर काट डाले। मगर हरिश्चन्द्र को अपनी ज़िंदगी से घृणा हुई। वह अपनी पत्नी के साथ पुत्र की चिता पर जलने को तैयार हो गये।

चिता सजाकर उस पर अपने पुत्र के शव को रखा। इसके बाद पति-पत्नी देवी का ध्यान करके चिता में आग लगाने को हुए, उस वक़्त ब्रह्मा आदि देवता इन्द्र के साथ प्रत्यक्ष हुए, अपना परिचय देकर रोहित पर अमृत की वर्षा कराई। रोहित ज़िंदा हो उठ बैठा। इन्द्र ने हरिश्चन्द्र को स्वर्ग में जाने के लिए निमंत्रित किया। यमराज ने हरिश्चन्द्र को बताया कि उन्होंने ही चाण्डाल का रूप धर लिया है।

इसके बाद हरिश्चन्द्र ने अपने पुत्र का राज्याभिषेक किया और वह अपनी पत्नी सहित इन्द्र के साथ स्वर्ग में चले गये।

(समाप्त)

रतन एक गरीब गृहस्थ है। उसकी बेटी की शादी तै हो गई। उसने अपने परिवार का खर्चा काटकर थोड़े रुपये जमा किये, शहर में गहने खरीदने चल पड़ा। श्यामलाल की दूकान में एक गहना और दूकानों से सस्ता देख रतन ने खरीद लिया।

रतन अपने फटे-पुराने कपड़ों के बीच उस गहने को छिपाकर अपने गाँव की ओर चल पड़ा। रास्ते में तीन आदमियों ने लाठियाँ दिखाकर उसे रोका और पूछा– "तुम अपने पास जो कुछ है, दे दो, वरना तुम्हारा सर फोड़ देंगे।"

रतन ने अचरज में आकर कहा– "भाइयो, मुझ जैसे गरीब के पास रहेगा ही क्या? मुझे छोड़ दो।"

एक ने रतन के कंधे पर लाठी टिकाकर पूछा–"तुमने अपने कपड़ों के बीच जो गहना छिपा रखा है, उसे बाहर निकालो तो सही।"

रतन के बदन में पसीना छूटने लगा। उसकी सारी मेहनत की कमाई उसी गहने को खरीदने में लग गई थी। पर गहने का पता इन लोगों को चल गया है।"

रतन ने लाचार होकर वह गहना उन लोगों के हाथ रख दिया। चोर उस गहने को लेकर भाग गये।

गहना तो खो गया, मगर रतन का दिमाग तेजी के साथ काम करने लगा। अपने फटे कपड़ों के बीच छिपाये गये गहने का पता उन्हें कैसे चल गया? जिसने उससे यह बात कही, उसको रतन ने श्यामलाल की दूकान में देखा था।

इस बात की याद आते ही रतन फिर शहर को लौट आया। वह ज्यों ही श्यामलाल की दूकान पर पहुंचा, त्यों ही दूकान के बाहर रतन ने उसे लूटनेवाले चोरों को खड़े हुए पाया। रतन के मन में

कुमकुम गोयंका

को बता भी दे तो वह अधिकारियों को घूस देकर खरीद सकता है। ऐसे व्यक्ति को रंगे हाथ पकड़वा देना है। यों सोचकर रतन उसी दूकान के पास ताक में बैठा रहा। उसी के जैसे एक किसान को दूकान में क़दम रखते रतन ने देखा और लोगों के बीच जाकर वह दूसरे किसान और व्यापारी पर निगरानी रखे रहा।

श्यामलाल उस किसान के हाथ कोई गहना बेचते हुए पूछ रहा था–"भाई तुम किस गाँव के हो...क्या उसी गाँव को लौटते हो? बेचारे पैदल चलकर जाओगे?" यों वह सहानुभूति दिखा रहा था, जैसे उसके साथ दिखाई थी।

यह सहानुभूति पाकर किसान बड़ा खुश हुआ और उसने सच्ची बात बताई।

किसान ज्यों ही दूकान से बाहर निकलकर गली में घुस पड़ा, त्यों ही रतन को लूटनेवाले तीनों चोर थोड़ी दूर तक उसका पीछा करते रहे, फिर तेजी के साथ शहर के बाहर चले गये।

मौक़ा पाकर रतन उस किसान को दूसरी गली में ले गया, उसने अपना नाम, गाँव का नाम तथा गहना खोने का सारा समाचार सुनाया।

संयोग की बात थी कि रतन के गाँव में उस किसान के रिश्तेदार भी थे।

यह विचार आया कि चिल्लाकर लोगों को बुलावे तो इस शहर में उसके जैसे गँवार व्यक्ति की बात सुननेवाला कौन है? वह सच्ची बात को कैसे साबित कर सकेगा?

रतन से गहना चुरानेवाला व्यक्ति दूकान के अन्दर चला गया। वह रुपये लेकर बाहर आया, तीनों ने वहीं पर रुपये बांट लिये।

इसे देखने पर रतन के तन-बदन में आग लग गई। उसने सोचा–'श्यामलाल उन आदमियों के द्वारा अपने ग्राहकों को आप ही लूट रहा है। इसीलिए उसकी दूकान में गहनों की क़ीमत और दूकानों से कम लेता है। इस बात को अधिकारियों

रतन ने उसे समझाया–"भाई, तुम्हारे गहने को श्यामलाल के अनुचर लूट लेंगे। तुम एक नकली गहना खरीदकर उसे चोरों के हाथ दे दो। तुम्हारे असली गहने को उनकी आँख बचाकर कहीं छिपा रखो। इसके बाद मैं उनकी खबर लूँगा।"

"असली गहने को तुम अपने पास रख लो, चोरों को पकड़ाने के बाद मैं तुमसे यह गहना ले लूँगा।" यों कहकर किसान ने अपने खरीदे हुए सोने के गहने को रतन के हाथ दे दिया, सस्ते में एक नकली गहना खरीदकर अपने गाँव की ओर चल पड़ा।

इसके बाद रतन श्यामलाल की दूकान पर पहुँचा, रोनी सूरत बनाकर बोला– "सेठजी, मैंने तुम्हारे पास जो गहना खरीदा था, उसके साथ मैंने अपने गाँववालों के लिए जो हीरों की माला भी खरीदी थी, इन दोनों को रास्ते में तीन चोरों ने लूट लिया है। मैं अपने गाँव जाकर उन्हें अपना चेहरा कैसे दिखा सकता हूँ? मैंने उन चोरों में से एक को आप की दूकान में देखा है। शायद आप उसके बारे में कोई खबर दे सके, इस ख्याल से आप के पास चला आया हूँ।"

श्यामलाल यह सोचकर चौंक पड़ा कि चोरों ने हीरे की माला की बात उससे छिपा रखी है। इसका मतलब है कि उसकी आँख बचाकर ये लोग व्यापार करते हैं।

श्यामलाल अपने आवेश को रोकने के प्रयत्न में था, तभी किसान यों बोला– "सेठ साहब, यही बात नहीं, वे लोग जो गहने लूटते हैं, उन्हें और कहीं बेचकर उनके बदले नकली गहने बनाने के प्रयत्न में हैं।"

"तुम जिन आदमियों की बात कहते हो, उनके बारे में मैं कुछ नहीं जानता, तुम जा सकते हो।" यों कहकर श्यामलाल ने रतन को भेज दिया और वह चोरों का इंतज़ार करने लगा।

थोड़ी देर बाद चोर किसान के हाथ लूटे गये नक़ली गहने को लेकर आ पहुँचे और उसे श्यामलाल के हाथ दे दिया। सेठ ने उसे कसौटी पर कसकर समझ लिया कि वह तो एक नकली गहना है।

इस पर श्यामलाल क्रोध में आ गया। उसने गरजकर पूछा–"असली गहना कहाँ पर है?"

चोरों के चेहरे पीले पड़ गये। उसी समय सेठ ने फिर पूछा–"तुमने इसके पहले एक और आदमी के यहाँ से हीरों की माला चुरा ली, वह कहाँ है? उसे भी मेरे हाथ देते तो क्या मैं ज़्यादा रुपये न देता?"

"क्या बोले? हीरों की माला?" यों पूछते चोर सब अचरज में आ गये।

उसी वक़्त रतन न्यायाधिकारी और सिपाहियों को साथ लेकर वहाँ पर आया। तब तक गली में उनका इंतजार करनेवाला दूसरा किसान भी दूकान के अन्दर आया।

चोर पकड़े गये। रतन ने किसान का गहना उसे दे दिया। न्यायाधिकारी को किसान ने बताया कि किस तरह उन तीनों चोरों ने उसके यहाँ से नकली गहना चुरा लिया है। वह नकली गहना अभी तक श्यामलाल के हाथ में ही था।

रतन को उसका खोया गहना तो मिल ही गया, साथ ही चोरों को पकड़ाने के कारण उसे इनाम के रूप में गहने की क़ीमत भी मिल गई।

इसके बाद चोरों तथा श्यामलाल को भी सिपाही पकड़कर ले गये।

अनुभव

मेवाड़ राज्य में एक रिवाज था। राजा के पिता या दादा के सालाना के दिन राज्य के किसी परिवार के एक व्यक्ति को राजा बनने का मौक़ा दिया जाता था.।

एक वर्ष यह मौक़ा एक किसान परिवार को मिला। उस परिवार में एक किसान, उसकी पत्नी और पुत्र जयराम तीन लोग थे। उनमें से कोई एक उस दिन राजा बन सकता था। मगर किसान ने उस मौक़े का लाभ उठाया, इसलिए उसकी पत्नी और जयराम को यह मौक़ा नहीं मिला।

दूसरे साल भी संयोग से उसी परिवार को राजा बनने का मौक़ा मिला। इस बार किसान की पत्नी ने उस मौक़े का फ़ायदा उठाया। उस वर्ष भी जयराम की इच्छा की पूर्ति न हो सकी।

बीस साल गुजर गये। जयराम की शादी हुई और उसका एक बच्चा भी हुआ। अचानक राजा बनने का मौक़ा जयराम के.परिवार को मिला। जयराम पगड़ी बांधे, अच्छी पोशाकें पहनकर राजा बनने के लिए घर से चल पड़ा।

पर दो मिनट बाद वह लौट आया, अपनी पोशाकें उतारने लगा। पत्नी ने पूछा– क्या बात है?" जयराम ने यही जवाब दिया–" इस बार लड़के को भेज दो।"

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ मार्च १९८१ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

P. V. Subramaniam

★

Pranlal K. Patel

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ जनवरी १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें : चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

नवम्बर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : ज़िंदगी एक हसीन मेला है!

द्वितीय फोटो : फिर भी यहाँ पर कोई अकेला है!!

प्रेषक : **राजकुमार मल्हारिया**, २०७, जयरामपुर कॉलोनी, इंदौर-४५२००४ (म. प्र.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

मेरे जन्म दिन पर
एक नया उपहार
यूकोबैंक की
पास बुक
उपहारों को जुटाएगा यह उपहार
देखो ! यूकोबैंक की पास बुक का
कमाल ।
इस अनूठे उपहार के लिए
माँ को धन्यवाद । और मेरी
छोटी-छोटी बचत को कई
गुना बढ़ा देने के लिए
यूकोबैंक को भी धन्यवाद ।
यूनाइटेड कमर्शियल बैंक
यह मित्रवत् बैंक आपके पास-पड़ोस में ही है ।
UCO/CAS-69/80 HIN